

卐 श्रीमद्राघवो विजयते 卐

धर्मचक्रवर्ती, महामहोपाध्याय, जीवनपर्यन्त कुलाधिपति, वाचस्पति, महाकवि
श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज
का राष्ट्रीय, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक चेतना का संवाहक

श्रीतुलसीपीठसौरभ

(मासिक पत्र)

सीतारामपदाम्बुजभक्तिं भारतभविष्यु जनतैक्यम्।
वितरतु दिशिदिशि शान्तिं श्रीतुलसीपीठसौरभं भव्यम्॥

वर्ष १४	अक्टूबर २००९ (४, ५ नवम्बर को प्रेषित)	अंक-२
संस्थापक-संरक्षक श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज संरक्षक एवं प्रकाशक डॉ० कु० गीता देवी (पूज्या बुआ जी) प्रबन्धन्यासी, श्रीतुलसीपीठ सेवान्यास, चित्रकूट सम्पादक आचार्य दिवाकर शर्मा 220 के, रामनगर, गाजियाबाद-201001 मो०- 09971527545 सहसम्पादक डा० सुरेन्द्र शर्मा 'सुशील' डी-255, गोविन्दपुरम्, गाजियाबाद-201001 दूरभाष : 0120-2767255, मो०-09868932755 प्रबन्ध सम्पादक श्री ललिता प्रसाद बड़धवाल सी-295, लोहियानगर, गाजियाबाद-201001 0120-2756891, मो०- 09810949921 सहयोगी मण्डल (ये सभी पद अवैतनिक हैं) डा० श्रीमती वन्दना श्रीवास्तव, 09971149779 श्री दिनेश कुमार गौतम, 09868977989 श्री सत्येन्द्र शर्मा एडवोकेट, 09810719379 श्री अरविन्द गर्ग सी.ए., 09810131338 श्री सर्वेश कुमार गर्ग, 09810025852 डॉ० देवकराम शर्मा, 09811032029	पूज्यपाद जगद्गुरु जी के सम्पर्क सूत्र : श्रीतुलसीपीठ, आमोदवन, पो० नया गाँव श्रीचित्रकूटधाम (सतना) म०प्र० 485331 07670-265478, 05198-224413 वसिष्ठायनम् - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य मार्ग रानी गली नं०-1, भूपतवाला, हरिद्वार (उत्तरांचल) दूरभाष-01334-260323 श्री गीता ज्ञान मन्दिर भक्तिनगर सर्कल, राजकोट (गुजरात) दूरभाष-0281-2364465 पंजीकृत सम्पादकीय कार्यालय एवं पत्र व्यवहार का पता आचार्य दिवाकर शर्मा, 220 के., रामनगर, गाजियाबाद-201001 मो०- 09971527545	

रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले विषयानुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
१.	सम्पादकीय	-	३
२.	वाल्मीकिरामायण सुधा (५४)	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	४
३.	श्रीमद्भगवद्गीता (८५)	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	८
४.	शिखा की वैज्ञानिकता का रहस्य	पूज्यपाद पं० दीनानाथ शास्त्री सारस्वत	१०
५.	रासपञ्चाध्यायी विमर्श (४)	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	१२
६.	श्रीमद्वाल्मीकि रामायण में श्रीहनुमच्चरित्र	श्री पं० बालकृष्ण कौशिक	१४
७.	‘बर्हापीड’ गाने को	प्रस्तुति-श्रीमती मधु शर्मा	१६
८.	पूज्यपाद गुरुदेव के श्रीमुख से	आचार्य दिवाकर शर्मा	१७
९.	रामनामजपतां कुतो भयम्	आचार्य डॉ० श्रीजयमन्त श्री मिश्र	२२
१०.	बाँहन में भर लूँगी	प्रस्तुति-श्रीमती माधवी अग्रवाल	२३
११.	आध्यात्मिक और सांस्कृतिक तीर्थ.....	डॉ० हरप्रसाद दूबे	२४
१२.	‘षष्टिपूर्ति’ अभिनन्दनग्रन्थ	आवश्यक सूचना	२७
१३.	“पर उपदेश कुशल बहुतेरे”	साध्वी विश्वेश्वरी देवी (मानस माधुरी)	२८
१४.	पूज्यपाद जगद्गुरु जी के आगामी कार्यक्रम	प्रस्तुति- पूज्या बुआ जी	२९
१५.	शहद स्वास्थ्य का अमूल्य खजाना है	श्री हरिनारायण ‘महाराज’	३०
१६.	व्रतोत्सवतिथिनिर्णयपत्रक	-	३२

सुधी पाठकों से विनम्र निवेदन

- ‘श्रीतुलसीपीठसौरभ’ का प्रत्येक अंक प्रत्येक दशा और परिस्थिति में प्रत्येक महीने की ४ तथा ५ तारीख को डाक से प्रेषित किया जाता है। पत्रिका में छपे महीने का अंक आगामी महीने में ही आपको प्राप्त होगा।
- ‘श्रीतुलसीपीठ सौरभ’ मंगाने हेतु बैंक ड्राफ्ट ‘श्रीतुलसीपीठसौरभ’ के नाम से ही बनवाएँ तथा प्रेषित लिफाफे के ऊपर हमारा नाम तथा पूरा पता स्पष्ट अक्षरों में लिखें। मनीआर्डर पर हमारा नाम-पता ही लिखें प्रधान सम्पादक अथवा प्रबन्ध सम्पादक कभी न लिखें।
- पत्रव्यवहार करते समय अथवा ड्राफ्ट-मनीआर्डर भेजते समय अपनी वह ग्राहक संख्या अवश्य लिखें जो पत्रिका के लिफाफे के ऊपर आपके नाम से पहले लिखी है।
- ‘श्रीतुलसीपीठसौरभ’ में ‘पूज्यपाद जगद्गुरु जी’ से अभिप्राय धर्मचक्रवर्ती श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज समझा जाए।
- ‘श्रीतुलसीपीठ सौरभ’ में प्रकाशित लेख/कविता/अथवा अन्य सामग्री के लिए लेखक/कवि अथवा प्रेषक महानुभाव ही उत्तरदायी होंगे, सम्पादक मण्डल नहीं।
- ‘श्रीतुलसीपीठसौरभ’ प्राप्त न होने पर हमें पत्र लिखें अथवा फोन करें। हम यद्यपि दूसरी बार पुनः भेजेंगे। किन्तु अपने डाकखाने से भलीप्रकार पूछताछ करके ही हमें सूचित करें।
- डाक की घोर अव्यवस्था के चलते हमें दोषी न समझें। हमें और आपको इसी परिस्थिति में ‘पूज्यपाद जगद्गुरु जी’ का कृपा प्रसाद शिरोधार्य करना है।
- सुधी पाठक अपने लेख/कविता आदि स्पष्ट अक्षरों में लिखकर भेजें। यथासमय-यथासम्भव हम प्रकाशित करेंगे। अप्रकाशित लेखों को लौटाने की हमारी व्यवस्था नहीं है।

सदस्यता सहयोग राशि

संरक्षक	११,०००/-
आजीवन	५,१००/-
पन्द्रह वर्षीय	१,०००/-
वार्षिक	१००/-

-सम्पादकमण्डल

श्रीतुलसीपीठ सेवान्यास, चित्रकूट के स्वामित्व में मुद्रक तथा प्रकाशक डॉ० कु० गीतादेवी (प्रबन्धन्यासी) ने श्री राघव प्रिंटर्स, जी-17 तिरुपति प्लाजा, बेगम पुल रोड, बच्चापार्क, मेरठ, फोन (का०) 4002639, मो० 9319974969, से मुद्रित कराकर कार्यालय 220 के., रामनगर, गाजियाबाद से प्रकाशित किया।

सम्पादकीय-

भगवदीयभाव भक्तों को सुख देते हैं

सनातन वैदिक धर्म के प्रतिपालक एवं मर्यादा और मानवता के प्रतिष्ठापक, अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक भगवान् श्रीसीताराम जी की अकारण करुणा के परिणामस्वरूप ही भक्तवृन्द भक्तिभगवती का परमानन्द प्राप्त करते हैं। उन्हीं की कृपा से जहाँ संसार का संचालन होता है वहीं भक्तों-सन्तों और साधकों का नित्य योगक्षेम होता है- ऐसा वे महानुभाव कहा करते हैं जो भारतीय इतिहास की घटनाओं को देखते-सुनते हैं तथा अपने जीवन में प्रतिक्षण अनुभव करते रहते हैं।

जिनको संसार की निस्सारता का संज्ञान है और भगवान् की कृपाकादम्बिनी की मस्ती प्राप्त है वे भले ही कम मात्रा में हों धन्य हैं उनका जीवन-वंश और सङ्ग प्रणम्य है। ऐसे पूज्यमहानुभावों को भगवान् के नामरूपलीलाधाम की प्रत्येक कथा में अद्भुत आनन्द आता है। भगवान् की बाललीलाओं के वर्णन सुनकर ऐसे सन्त अश्रुपूर्ण हो उठते हैं। भगवान् की रूपमाधुरी के दर्शन के समय वे अवाक् हो जाते हैं। भगवान् की भिन्न-भिन्न लीलाओं के रहस्यों का बोध करने के पश्चात् वे अमलात्मामहात्मा भक्तिरस में निमग्न हो जाते हैं। इतना ही क्यों जो पृथिवी के आभूषणस्वरूप हैं ऐसे भक्तजन भगवान् के विविधधामों में निवास करने को ही अपना परमसौभाग्य मानते हैं और सत्य है भी यही। आज भी भगवद्धामों में अनुभव किया जा सकता है कि वहाँ पूर्वकाल के तपस्वियों अथवा साधकों की साधना के परमाणु आज भी दानव को मानव बनाने का चमत्कार जैसा कर देते हैं। मनुष्य के सौभाग्य अथवा प्रारब्ध को जैसे ही सिद्धों की साधना के परमाणु मिलते हैं वे मनुष्य का जीवन सुगन्धित कर देते हैं। धन्य-धन्य कर देते हैं।

सौभाग्य से इस वर्ष भी मार्गशीर्ष शुक्ल पञ्चमी तिथि नवम्बर २००९ को भगवान् श्रीसीतारामविवाह भिन्न स्थानों पर सोल्लास सम्पन्न होगा। श्रीअवध और श्रीमिथिला में तो हजारों-लाखों नर-नारी इतने नव्य-नव्य, भव्य-भव्य भाव प्रकट करेंगे जिसका वर्णन शब्दों में सम्भव नहीं है। भक्तजन भावों में और दुष्टजन अभावों में जीते हैं-यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है, तभी तो दुष्टजन भगवद् भक्तों के भवदीयभाव की चर्चा प्रारम्भ होते ही भाग खड़े हो जाते हैं और सन्तजन-भक्तजन अपने प्यारे प्राणधन रघुनन्दन अथवा नन्दनन्दन की भावभरी रसभरी एक पंक्ति पर ही नृत्य करने लगते हैं। सुखद संयोग है कि पूज्यपाद जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज द्वारा रचित “श्रीसीतारामकेलिकौमुदी” नामक अत्यन्त सुखद सुन्दर खण्डकाव्य रामभक्तों के कण्ठ का हार बना हुआ है। भगवान् के निरुपम भावाद्वैत का तृतीय किरण से एक पद पढ़कर भक्तों को ब्रह्मानन्द तो आएगा ही काव्यानन्द भी आएगा-

राम ही सीता हैं सीता ही राम हैं दोऊ के भेद सुबेद मिटावै।

जोड़ श्रीराम हैं सोई हैं सीता जू या ही रहस्य सदा श्रुति गावै।।

एकहिं ब्रह्म बन्यौ जुगलीला में माता है एक पिता एक भावै।

सोइ कुमार और सोई कुमारी हैं 'गिरिधर' द्वै कहि एक बतावै।।

आचार्य दिवाकर शर्मा प्रधान सम्पादक से केवल
मोबाइल नं०- 09971527545 पर ही सम्पर्क करें

आचार्य दिवाकर शर्मा
प्रधान सम्पादक

(गतांक से आगे)

वाल्मीकिरामायण सुधा (५४)

□ धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

तुम्हारा उद्योग, धैर्य, पराक्रम और सुग्रीव का सन्देश ये सब मुझे इस बात की सूचना दे रहे हैं कि तुम्हारे द्वारा कार्य की सिद्धि अवश्य होगी।

हनुमान जी को राम नाम की मुद्रिका दे दी। यही वैष्णवता है, जब तक जीवन में राम नाम की मुद्रा नहीं मिलती तब तक व्यक्ति संसार सागर को पार नहीं कर सकता। यही यहाँ का सिद्धान्त है। हम न तो प्रतीकवाद पर विश्वास करते हैं न प्रतीकवाद की चर्चा करते हैं। उपन्यासों में प्रतीकवाद होता है इतिहास में कभी प्रतीकवाद हो ही नहीं सकता। हनुमान जी महाराज चल पड़े। महर्षि वाल्मीकि वर्णन करते हैं-

अतिबल बलमाश्रितस्तवाहं

हरिवर विक्रम विक्रमैरनल्यैः।

पवनसुत यथाधिगम्यते सा

जनकसुता हनुमंस्तथा कुरुष्व॥

भगवान् श्रीराम कहते हैं-पवनकुमार हनुमान! जिस प्रकार भी जनकनन्दिनी सीता जी तुम्हें प्राप्त हो सकें वैसा ही प्रयत्न करो। वानर पूरा विन्ध्य खोज डाले पर कहीं पता नहीं चला। अब अनशन की स्थिति बन गई। अंगद जी ने कह दिया अब अनशन करेंगे। हनुमान जी ने बहुत समझाया पर अंगद जी बोले जब कार्यसिद्धि में हम असफल हैं तो हमको मरने दीजिए। तब तक जटायु का नाम आ गया। वानर परस्पर कहने लगे कि जटायु जी धन्य थे जो राम जी की सेवा में मर गये। उधर बिल में से निकलने का स्थान नहीं मिला तो स्वयंप्रभा मिली। स्वयम्प्रभा

ने कहा अपने उपार्जित तप से हम आप सबको सागर के तट पर पुनः भिजवा दे रहे हैं। पर सागर को तुम लोग कैसे पार करोगे? तीनों दिशाओं से वानर आ गये सबने बता दिया कि सीता जी का कहीं पता नहीं लगा। वाल्मीकीय रामायण में बहुत करुण वर्णन है। अंगद जी श्रीरामचरितमानस में कहते हैं-

हम सीता के खोज बिहीना।

नहिं जैहैं जुबराज प्रवीना॥

जटायु का नाम लिया तो सम्पति आये। परिचय पूछने लगे बोले मेरे भैया की चर्चा कौन कर रहे हैं। मेरे भैया का समाचार सुनाओ। अंगद आदि वानर भयभीत हो गये। सम्पति ने कहा डरो मत मुझे मेरे भाई जटायु के विषय में विस्तार से बताओ। जटायु का वृत्तान्त जानकर सम्पति ने कहा-

रामस्य यदिदं कार्यं कर्तव्यं प्रथमं मया।

जरया च हृतं तेजः प्राणाश्च शिथिला मम॥

यद्यपि वृद्धावस्था ने मेरा तेज हर लिया है और मेरी प्राणशक्ति शिथिल हो गयी है तथापि श्रीरामचन्द्र का यह कार्य मुझे सर्वप्रथम करना है। सम्पति ने कहा-

तरुणी रूपसम्पन्ना सर्वाभरणभूषिता।

हियमाणा मया दृष्टा रावणेन दुरात्मना॥

एक दिन मैंने भी देखा कि दुरात्मा रावण अलंकारों से सुशोभित एक रूपवती युवती को हरकर लिये जा रहा था।

क्रोशन्ती राम रामेति लक्ष्मणेति च भामिनी।

भूषणान्ययविध्यन्ती गात्राणि च विधुन्वती॥

वह मानिनी देवी हा राम! हा लक्ष्मण! की रट लगाती हुई अपने आभूषण गिराती हुई और काँपती हुई छटपटा रही थी। मेरा पुत्र सुपार्श्व मेरे लिए आहार लेने गया था वह तो रावण को पकड़कर उसका गला घोट रहा था पर रावण ने विनती की तब उसे छोड़ दिया। सुपार्श्व ने मुझे आकर बताया था पर मैंने ध्यान नहीं दिया। आप चिन्ता न करें मैं देख रहा हूँ और बता रहा हूँ। सौ योजन के पार एक द्वीप है। वहाँ रावण ने सीता जी को छिपा कर रखा है रावण आतंकवादियों का सरगना है। करोड़ों लादेन से भी भयंकर है रावण।

तस्यां वसति वैदेही दीना कौशेयवासिनी।

उस लंका की अशोकवाटिका में सीता जी रात दिन सोचती रहती हैं राम राम कहकर जी रही हैं। सहसा सम्पाति के पंख आ गये। सम्पाति ने कहा सूर्यनारायण के पास हम जा रहे थे मेरे पंख जल गये। निशाकर नाम के मुनि जिनको श्रीरामचरितमानस में चन्द्रमा कहा गया है उन्हीं को यहाँ निशाकर कहा गया है उन्होंने हमको बताया था कि वानर सन्त हैं सन्त के जब दर्शन होते हैं तो पक्ष (पंख) जम जाते हैं। वानरों को देखने से सम्पाति के पंख जम गये इसका भाव यह है जब तक भगवान का पक्ष निश्चित नहीं होगा। पक्ष (पंख) दो होते हैं उसी से व्यक्ति उड़ पाता है। या तो ज्ञान का पक्ष हो या भक्ति का। उनमें एक प्रधान होता है। भक्त के लिए दो पंख होते हैं। दोनों में आनन्द करता है, एक मिथिलापक्ष होता है और एक अवधपक्ष। हमारा भी दोनों में आनन्द रहता है पर हमारा प्रधानपक्ष अवधपक्ष है। मिथिला वालों के यहाँ प्रधानपक्ष मिथिला है। हम तो हैं ही अवध के इसे कोई नकार नहीं सकता है हम अवध के ही रहेंगे। संसार के सारे सम्बन्धों को हमने छोड़ रखा है पर

भगवान के सम्बन्ध में आज भी आनन्द आता है। मिथिला में जब होते हैं तो बिना गारी के आनन्द नहीं आता। कल भी मिथिलानियों ने खूब गारी गाई और हमने चकाचक भोजन किया। सन्तों को देखकर सम्पाति के पंख क्यों जमे? इसका अर्थ यह है कि जब सन्त आते हैं तभी भक्ति का पक्ष जीवन में आता है। वानर सन्त हैं अतः सम्पाति को भक्ति का पक्ष मिल गया। सीता जी के दर्शन जब सम्पाति ने कराये तब वानरों ने कहा कि जब तुमने भक्ति की चर्चा की है तो तुम्हारे पास कोई न कोई सम्बन्ध होना चाहिए बिना सम्बन्ध के भक्ति नहीं हो सकती। पंख आते ही सम्पाति उड़ गया। वानर चिन्तित हैं। गोस्वामी जी लिखते हैं-

निज निज बल सब काहू भाखा।

पार जाइ कर संशय राखा।।

सब अपना बल कह रहे हैं। महर्षि वाल्मीकि वर्णन करते हैं-

गजो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः।

मैन्दश्च द्विविदश्चैव सुषेणो जाम्बवांस्तथा।।

सबने अपने बल का वर्णन किया दस से प्रारम्भ किया नब्बे तक गये।

गज ने कहा मैं दस जा सकता हूँ गवाक्ष ने कहा मैं बीस योजन इसी प्रकार सब कहते गये। तब जाम्बवान ने कहा मैं बूढ़ा हो गया हूँ तब भी नब्बे योजन एक छलांग में जा सकता हूँ। अंगद जी ने कहा-

अहमेतद् गमिष्यामि योजनानां शतं महत्।

निवर्तने तु मे शक्तिः स्यान्नवेति न निश्चितम्।।

मैं एक छलांग में सौ योजन जा तो सकता हूँ पर लौटने में मैं सफल होऊंगा या नहीं यह कोई निश्चित नहीं है। हमार हनुमनऊ एकान्त में चुपचाप बैठे हैं। जाम्बवान हनुमान जी को प्रेरित करते हैं-

ततः प्रवीतं प्लवतां वरिष्ठ-
मेकान्तमाश्रित्य सुखोपविष्टम्।
संनोदयामास हरिप्रवीरो
हरिप्रवीरं हनुमन्तमेव॥

ऐसा कहकर वानरों और भालुओं के वीर जाम्बवान् ने वानरसेना के श्रेष्ठ वीर हनुमान जी को ही प्रेरित किया जो एकान्त में जाकर सुख से बैठे थे। उन्हें किसी बात की चिन्ता नहीं थी और वे दूर तक की छलाँग मारने वालों में सर्वश्रेष्ठ थे। जाम्बवान ने देखा-

अनेकशतसाहस्रीं विषण्णां हरिवाहिनीम्।
जाम्बवान् समुदीक्ष्यैवं हनूमन्तमथाब्रवीत्॥

असंख्य वानरीसेना को इस प्रकार विषाद में पड़ी देखकर जाम्बवान ने हनुमान जी से कहा-
वीर वानरलोकस्य सर्वशास्त्रविदां वर।
तूष्णीमेकान्तमाश्रित्य हनूमन् किं न जल्पसि॥

हे वानरलोकवीर तथा सम्पूर्ण शास्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ हनुमान् ! तुम एकान्त में आकर चुपचाप क्यों बैठे हो? कुछ बोलते क्यों नहीं हो।

बलं बुद्धिश्च तेजश्च सत्त्वं च हरिपुंगव।
विशिष्टं सर्वभूतेषु किमात्मानं न सज्जसे॥

हे वानरशिरोमणे! तुम्हारा बल बुद्धि तेज और धैर्य भी समस्त प्राणियों में सबसे बढ़कर है फिर तुम स्वयं को समुद्र लाँघने के लिये तैयार क्यों नहीं करते? युवावस्था में यह वृद्धता कैसी? राजीवलोचन राम शोकाकुल हैं और तुम माला जप रहे हो। अंजनानन्दवर्धन यह उचित नहीं है। तुम वही हो जिसने एक छलाँग में उछलकर सूर्यनारायण को अपना ग्रास बना लिया था। इन्द्र ने जब वज्र मारा था तुम्हारा हनु (ठोड़ी) नहीं टूटा था प्रत्युत इन्द्र के वज्र के दाँत टूट गये थे। विचार करो-

पवन तनय बल पवन समाना।
बुधि विवेक विज्ञान निधाना॥
कवन सो काज कठिन जग माहीं।
जो नहीं होइ तात तुम पाहीं॥
राम काज लागि तव अवतारा।
सुनि कपि भयऊ पर्वताकारा॥

तुम्हारा अवतार श्रीराम के कार्य के हेतु हुआ है। अतः हे अंजनानन्दवर्धन-

उत्तिष्ठ हरिशार्दूल लंघयस्व महार्णवम्।
परा हि सर्वभूतानां हनुमन् या गतिस्तव॥

हे वानरश्रेष्ठ! उठो और इस महासागर को लाँघ जाओ। क्योंकि तुम्हारी गति सभी प्राणियों से बढ़कर है। सम्पूर्ण प्राणियों के गन्तव्य भगवान श्रीराम तुम्हारे वश में हैं। इस समय सभी वानर तुम्हारी ओर आशा से देख रहे हैं-

विषण्णाः हरयः सर्वे हनुमन् किमुपेक्षसे।
विक्रमस्व महावेग विष्णुस्त्रीन् विक्रमानिव॥

हे महावीर हनुमान्! सब वानर चिन्ता में पड़े हैं। इनकी आप उपेक्षा क्यों कर रहे हो। महान वेगशाली वीर! जैसे भगवान विष्णु ने त्रिलोकी को नापने के लिए तीन पग बढ़ाए थे उसी प्रकार तुम भी अपने पैर बढ़ाओ।

तब हनुमान जी में आ गया वह तेज। महर्षि वाल्मीकि वर्णन करते हैं-

ततः कपीनामृषभेण प्रेरितः
प्रतीतवेगः पवनात्मजः कपिः।
प्रहर्षयंस्तांहरिवीरवाहिनीं
चकार रूपं महदात्मनस्तदा॥

इस प्रकार वानरों और भालुओं में श्रेष्ठ जाम्बवान की प्रेरणा पाकर कपिवर हनुमान जी को अपने महान वेग पर विश्वास हो गया। उन्होंने वानरवीरों की उस

सेना का हर्ष बढ़ाते हुए उस समय अपना विराट रूप प्रकट किया। हनुमान जी ने गर्जन करते हुए कहा—
उत्सहेयमतिक्रान्तुं सर्वानाकाश गोचरान्।
सागरान् शोषयिष्यामि दारयिष्यामि मेदिनीम्।
पर्वतांश्चूर्णयिष्यामि प्लवमानः प्लवंगमः।
हरिष्याम्युरुवेगेन प्लवमानो महार्णवम्।।

मैं आकाशादि में विचरण करने वाले समस्त ग्रहनक्षत्रों को लाँघकर आगे बढ़ने का उत्साह रखता हूँ। मैं चाहूँ तो समुद्र को सोख लूँगा, पृथ्वी को विदीर्ण कर दूँगा और कूद कूद कर पर्वतों को चूर चूर कर डालूँगा। महान वेग से महासागर को फाँदता हुआ मैं अवश्य उसके पार पहुँच जाऊँगा।

भविष्यति हि मे रूपं प्लवमानस्य सागरम्।
विष्णोः प्रक्रममाणस्य तदा त्रीन् विक्रमानिव।

समुद्र को लाँघते समय मेरा वही रूप प्रकट होगा जो तीनों पगों को बढ़ाते समय भगवान विष्णु का हुआ था।

बुद्ध्या चाहं प्रणश्यामि मनश्चेष्टा च मे तथा।

अहं द्रक्ष्यामि वैदेहीं प्रमोदध्वं प्लवङ्गमाः।।

वानरो! मैं बुद्धि से जैसा देखता या सोचता हूँ मेरे मन की चेष्टा भी उसके अनुरूप होती है। मुझे निश्चय है कि मैं विदेहकुमारी का दर्शन करूँगा अतः अब तुम सब लोग खुशियाँ मनाओ। सब वानर अत्यन्त हर्ष से एवं चकितभाव से उनकी ओर देख रहे थे। महर्षि वाल्मीकि कहते हैं—

तच्चास्य वचनं श्रुत्वा ज्ञातीनां शोकनाशनम्।

उवाच परिसंहृष्टो जाम्बवान् प्लवगेश्वरः।।

हनुमान जी की बातें वानरों के शोक को नष्ट करने वाली थीं। उन्हें सुनकर वानर सेनापति जाम्बवान को बड़ी प्रसन्नता हुई। वे बोले—

वीर केसरिणः पुत्रो वेगवान् मारुतात्मजः।
ज्ञातीनां विपुलः शोकस्त्वया तात प्रणाशितः।।

हे वीर केसरी के सुपुत्र, वेगशाली पवनकुमार! तुमने अपने बन्धुओं का महान शोक नष्ट कर दिया। हे तात!

ऋषीणां च प्रसादेन कपिवृद्धमतेन च।
गुरूणां च प्रसादेन सम्प्लव त्वं महार्णवम्।।

ऋषियों के प्रसाद, वृद्ध वानरों की अनुमति तथा गुहजनों की कृपा से तुम इस महासागर के पार जाओ। हम सब वानर—

स्थास्यामश्चैक पादेन यावदागमनं तव।
त्वद्गतानि च सर्वेषां जीवनानि वनौकसाम्।।

जब तक तुम लौटकर नहीं आओगे तब तक हम तुम्हारी प्रतीक्षा में एक पैर से खड़े रहेंगे। क्योंकि हम सब वानरों का जीवन तुम्हारे ही अधीन है। सबको भगवान अंजनानन्दन प्रभु प्रणाम कर रहे हैं।

स वेगवान् वेगसमाहितात्मा

हरिप्रवीरः परवीर हन्ता।

मनः समाधाय महानुभावो

जगाम लङ्कां मनसा मनस्वी।।

बोलो वीर बजरंगबली की जय, अंजनानन्दवर्धन प्रभु की जय। हनुमान जी महाराज की जय। स्वयं उनका प्रशस्त वेग है। हनुमान जी यह पहले कह चुके हैं कि जो गरुड़ का वेग है, जो पवन का वेग है उनसे दस गुना मेरा वेग होगा। काम क्रोध आदि से हनुमान जी का मन समाहित हो चुका है। उनके मन में किसी प्रकार का उद्वेग नहीं है। जिनकी कृपा से वानर वीर बने हैं, जो शत्रुओं को नष्ट करने वाले, महान प्रभाव सम्पन्न हनुमान जी भगवान राम में मन को लगाकर मन से लंका पहुँच गये।

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण का प्रथम भाग पूर्ण।

क्रमशः.....

श्रीमद्भगवद्गीता (८५)

(गतांक से आगे)

(विशिष्टाद्वैक श्रीराघवकृपाभाष्य)

भाष्यकार-धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

रा०कृ०भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! भिन्न भिन्न कर्मों की सफलता की इच्छा करते हुए लोग इस संसार में मुझसे अतिरिक्त इन्द्रादि देवताओं की पूजा करते हैं। अतः अत्यन्त शीघ्र ही मनुष्य लोक विषयिणी देवताओं के पूजन कर्म से उत्पन्न हुई सिद्धि उन्हें मिल जाती है।

व्याख्या- इसमें और कोई हेतु नहीं है, कारण है भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति की इच्छा तत्तद् देवताओं को उद्देश्य बनाकर कर्मों की सफलता की इच्छा करते हुए मुझसे अतिरिक्त इन्द्र-शंकर आदि देवताओं की लोग उपासना करते हैं। इससे उन्हें मनुष्य लोक में निश्चित ही शीघ्र सफलता मिल जाती है। 'मानुषे लोके' में विषय सप्तमी है, अर्थात् अन्य देवताओं के पूजन से लौकिक सफलता मिलती है। पर पारलौकिक सफलता के लिए तो मेरी ही उपासना करनी होती है। जैसे तुमने ही इन्द्र की उपासना करके उनसे दिव्यास्त्र प्राप्त किये तथा शंकर भगवान का यजन करके उनसे पाशुपतास्त्र पाया। इनसे तुम बाह्य शत्रुओं को जीत सकते हो, पर संसाररूप वृक्ष को काटने के लिए और कामरूप शत्रु को मारने के लिए तुम्हारे यह शस्त्र उपयोगी नहीं होंगे। उनके लिये तो ज्ञानखड्ग और असङ्गशस्त्र अपेक्षित है, अतः इनके लिए तुम्हें मेरी ही उपासना करनी होगी। ॥श्री॥

संगति- फिर भगवान सिंहावलोकन न्याय से तृतीय अध्याय के पश्चात् छूटे हुए विषय का वर्णन

करते हैं-

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः।
तस्य कर्तारपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम्॥

४॥१३॥

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! जिसमें गुण और कर्म का विभाग विद्यमान है, ऐसे चातुर्वर्ण्य का वेदरूप मैंने ही सर्जन किया है। उस चातुर्वर्ण्य का कर्ता होने पर भी मुझ अविनाशी को अकर्ता ही समझो। अर्थात् कर्म करके भी मैं कर्तृत्वाभिमान से शून्य रहता हूँ।

व्याख्या- जिसमें गुणों और कर्मों का विभाग है वही 'गुणकर्म विभागशः' कहा जाता है, यहाँ प्रथमा को अर्थ में ही अत्यन्त स्वार्थिक शष् प्रत्यय हुआ है। 'सर्वस्य द्वे' पा० अ० ८-१-१ सूत्र के भाष्य में भगवान भाष्यकार ने 'एकैकशः' का प्रयोग करके अत्यन्त स्वार्थिक शष् प्रत्यय का निर्देश किया है। यहाँ गुण और कर्म पूर्व जन्म के समझने चाहिए, न कि वर्तमान जन्म के। कारण कि वर्तमान के गुण कर्मों के आधार पर वर्णव्यवस्था में अनवस्था होगी। क्योंकि यही व्यक्ति एक ही दिन में चारों वर्णों में प्रवेश कर लेगा। 'तस्य कर्तारं' का तात्पर्य है- चातुर्वर्णात्मक सम्पूर्ण जीव जगत की रचना करके भी मैं अपने को अकर्ता ही मानता हूँ जबकि जीव बहुत थोड़े कर्मों को करके भी अपने कर्तृत्वाभिमान से मारा जाता है। यहाँ चातुर्वर्ण्य प्राणिमात्र में है, केवल मनुष्य में नहीं।

पशुओं में भी गौ, बैल ब्राह्मण, सिंह क्षत्रिय, घोड़ा आदि वैश्य और गधा, कुत्ता आदि चतुर्थ वर्ण माने गये हैं। इसी प्रकार पक्षी में भी तोता-ब्राह्मण, और कौवे को चतुर्थ माना गया है।

अतः सम्पूर्ण चिदजिदात्मक जीव चातुर्वर्ण्य में विभक्त हैं। ॥श्री॥

संगति- इसी प्रकार मेरा चिन्तन करने से अर्थात् मेरे अकर्ता स्वरूप का श्रवण, मनन निदिध्यासन करने से तुम स्वयं कर्म बन्धन से मुक्त हो जाओगे। इस पर भगवान दो श्लोकों में कहते हैं-

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते।

४/१४

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः।

कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम्॥

४/१५

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! मुझे कर्मलिप्त नहीं कर पाते। अर्थात् मेरे द्वारा किये जाते हुए भी सुभाषित फलों से दूषित नहीं करते। क्योंकि मुझे कर्मों के शुभ फल में स्पृहा नहीं है। इस प्रकार जो मुझे जानता है वह कर्मों द्वारा बाँधा नहीं जाता। मुझे इसप्रकार जान करके मोक्ष की अभिलाषा वाले तुमसे पूर्व पुरुषों द्वारा कर्म ही किया गया इसलिए तुम पूर्वजों द्वारा किये हुए अत्यन्त पूर्व कर्म को ही करो।

व्याख्या- 'न लिम्पन्ति' मुझे, कर्तृत्व का अभिमान नहीं है इसलिए कर्मों के शुभाशुभ फलों का मुझमें लेप नहीं होता। स्पृहा शब्द से उपलक्षण में अशुभ फल के द्वेष का भी निषेध समझना चाहिए। अर्थात् न तो भगवान को शुभ कर्म में स्पृहा होती है

और न ही अशुभ फल में द्वेष। 'अभिजानाति' इस प्रकार जो मुझे कर्म लेप, एवं कर्मों के रागद्वेष से मुक्त परमात्मा का अभीष्ट या जानता है उसे कर्म नहीं बाँधते। इसलिये मुझे जानकर कर्म करो ये तुम्हें भी नहीं बाँधेंगे। एवं, यहाँ, माम् शब्द की अनुवृत्ति है इसलिए तुम कर्म ही करो 'कर्मैव' कुरु एवकार से अकर्म और विकर्म का व्यवच्छेद है। 'पूर्वैः' का तात्पर्य है कि तुमसे पूर्ववर्ती जनकादि और भरतादि ने कर्म ही किया। 'पूर्वतरं' अतसैन अत स ऐन पूर्वम्। यह वैदिक होने से अत्यन्त प्राचीन परम्परा प्राप्त है। अथवा पूर्वान् अतारयत इति पूर्व तरं अर्थात् इससे तुम्हारे पूर्व पुरुष संसार सागर से तरे। यह तुम्हें भी तारेगा। ॥श्री॥

संगति- यहाँ अर्जुन को जिज्ञासा है कि हे द्वारिकाधीश आपने कुरु कर्मैव कहकर एवकार द्वारा कर्म से अतिरिक्त किसी पदार्थ का व्यवच्छेद किया है वह क्या है जिसे आप करने के लिये मना कर रहे हैं। उसका क्या स्वरूप है। इस प्रकार अर्जुन को प्रश्न करने के लिए इच्छुक देखकर 'वदतां' वरिष्ठ वनमाली बोले-

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्॥

४/१६

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- कर्म क्या है, अकर्म क्या है, और विकर्म क्या है, इस प्रसंग में बड़े बड़े मनीषी भी मोहित हो जाते हैं। इसलिए मैं तुम्हारे लिए उस कर्म का प्रवचन करूँगा जिसे जानकर अशुभ विकर्म से छूट जाओगे।

क्रमशः.....

गतांक से आगे-

शिखा की वैज्ञानिकता का रहस्य

□ पूज्यपाद पं० दीनानाथ शास्त्री सारस्वत

एक तर्क

(२१) एक तर्क यह किया जाता है कि मुसलमान, ईसाई आदि शिखा नहीं रखते, उन्हें हानि क्यों नहीं होती? इस पर यह जानना चाहिये कि सूक्ष्मरूप से हानि होती अवश्य है, परन्तु उसके अनुभव न होने से उन्हें उसका पता नहीं लगता। इससे उसकी अनावश्यकता तथा अयुक्तता सिद्ध नहीं हो जाती। आयुर्वेद ने जो नियम शरीर के स्वास्थ्य के कहे हैं; उनका उल्लङ्घन करने से आपाततः तो हानि प्राप्त होती हुई नहीं दिखती; परन्तु सूक्ष्मरूप से वह होती अवश्य है। अनुभव न होने से उन नियमों को बताने वाला आयुर्वेद तथा वे नियम अयुक्त नहीं हो जाते। वह हानि उत्तरोत्तर नियमों के उल्लङ्घन करते रहने से भीतर सञ्चित होती हुई शारीरिक शक्ति की दुर्बलता में ज्वरादि-रूप में प्रकट हो जाती है; परन्तु हम उसका कारण नहीं जान पाते। वैसे शिखा के भावाभाव में भी जान लेना चाहिये। हिन्दुओं की ईसाई-मुसलमानों से कुछ विशेषता अवश्य है; और वह सर्वसम्मत है। उनमें हिन्दुओं जैसे संयम, तथा मर्यादितता आदि का अभाव है; इसमें हमारी शिखा की ही कारणता मानी जावेगी। क्योंकि-जो बात जिसके होने पर होती है, जिसके न होने पर नहीं होती, वह उसी की मानी जाती है। नैषधचरितके चतुर्थ सर्ग में लिखा है- 'तदुदितः स हि यो वदनन्तरः'। स्वा० शङ्कराचार्य ने ब्रह्मसूत्र (३।३।५३ सूत्र) के भाष्य में कहा है- 'यो हि यस्मिन् सति भवति, असति च न भवति, स तद्धर्मत्वेन अध्यवसीयते'।

हमारे प्राचीन महानुभाव जहां लाभ देखते थे; उसको अवश्य नियत करते थे; बल्कि उसमें अर्थवादों का प्रयोग करने में भी संकुचित न होते थे। पहले समय यज्ञों में गुडूची (सतगिलोय या सोमरस) का उपयोग हुआ करता था; परन्तु उसके कसैले होने से बटु उससे मुंह फेर लेते थे। तब प्राच्य लोग कहते हैं-

'शिखा ते वर्धते वत्स! गुडूचीं श्रद्धया पिब'। जैसे आजकल के शिक्षित जनों को पता लग जावे कि- अमुक ओषधि के सेवन से दाढ़ी-मूँछ तथा चोटी के बाल उत्पन्न नहीं होते; तब उस ओषधि के कड़वी होने पर भी वे उसका सेवन बड़े संरम्भ से करेंगे; वैसे ही प्राचीनकाल में गुडूची को शिखा बढ़ाने वाला समझकर बटु उसका पानकर जाते थे; इससे स्पष्ट कि- वे बढ़ी हुई शिखा को लाभजनक मानते थे।

सनातन-हिन्दुधर्म में जिन वस्तुओं की पूजा प्रचलित है; जैसे कि-तुलसीपूजा, गोपूजा, व्रतानुष्ठान, शिखा-आदि; जिनके लिए वहाँ अर्थवाद भी उपन्यस्त किये जाते हैं; आपददर्शी लोग उनमें उपहास करते हैं; पर वैज्ञानिकों ने उनमें उनकी श्रद्धाधिकता पर विचार किया; तब उन्होंने तुलसी, गाय, व्रत आदियों में अनुसन्धान करके बड़े लाभ देखे। तब उन्होंने उन लाभों का प्रचार किया। अब वर्तमान शिक्षितों का भी उधर ध्यान रखने लगा है। खेद की बात है कि- आज के शिक्षित लोग हमारे पूर्वजों की आज्ञा से तो उनका आदर नहीं करते; पर जब आज के पाश्चात्य वैज्ञानिक उनपर अपनी स्वीकृति की मुहर लगाते हैं;

तभी उनका उधर ध्यान पड़ता है। वस्तुतः यह 'परप्रत्ययनेयबुद्धिता' है, जो ठीक नहीं।

शिखा के अन्य लाभ

(२२) गोगुर-परिमित शिखा के रखने से वीर्य की गति ऊपर को होती है; वह वीर्य परिपाक को प्राप्त हुआ-हुआ तेजरूप होकर शिखा के नीचे रहता है। इसी तेज को हिन्दु लोग मस्तिष्क मानते हैं। मनुष्य में यह तेज जितना गाढ़ होता है, मनुष्य उतना ही मस्तिष्कशाली तथा चिरायु होता है। इसी तेज को ओज भी कहते हैं; शिखा उसके संरक्षण का मुख्य साधन है; वैसा होने पर बहुत पुत्र होते हैं; शिखा-त्यागियों की तो बहुत कन्याएं उत्पन्न होती हैं। अतः शिखास्थापन लाभप्रद ही है।

इसके अतिरिक्त बाल स्वाङ्ग (अपना अङ्ग) माने जाते हैं, शिखा के बाल तो विशेष अङ्ग हैं। जैसे अङ्गहीन मनुष्य अशुभ माना जाता है, वैसे ही शिखा के केशरूप स्वाङ्ग से रहित को भी समझना चाहिये। वह ऐहिक, पारलौकिक शुभकर्म कलाप का अधिकारी नहीं रहता। जो लोग शिखा से अपने सिर की शोभा की हीनता मानते हैं, सीमान्त (मांग निकालने) आदि से अपनी शोभा में लगे हुए स्त्रीत्व को बढ़ा रहे हैं; इसी के परिणामस्वरूप उनकी कन्या सन्तानें बढ़ रही हैं, अथवा सन्तानहीनता हो रही है।

सन्ध्या आदि के समय आकाश द्वारा शिखाग्रन्थि को द्वारीभूत करके व्यापक दिव्य-शक्ति का आकर्षण होता है और ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश होता है। इस विषय में पाश्चात्य विद्वान् विक्टर ई क्रोमर का मत पहले दिखलाया जा चुका है। एतदर्थ ध्यान के समय नंगे सिर रहने का तथा शिखाग्रन्थिबन्धन का नियम है। 'स्नाने दाने जपे होमे सन्ध्यायां देवतार्चने। शिखाग्रन्थिं

विना कर्म न कुर्याद् वै कदाचन'।

जैसे वस्त्र में बंधी गांठ तरह-तरह के कार्य में लगे पुरुष को विशेष कार्य याद करा दिया करती है, वैसे ही शिखा की गांठ भी सांसारिक कार्य में ले हुए पुरुष को अपने कर्तव्य वैदिक कर्म कलापको याद करा देती है, शिखा-बन्धन मन, वाणी, शरीर की चंचलता नष्ट कर अपने कर्तव्य कर्म में स्थिरता कर दिया करता है। मन, वाक्, शरीर की स्थिरतापूर्वक किया हुआ ही कर्म शुभफलप्रद हुआ करता है। इस कारण शास्त्रकारों ने शुभ कर्म के प्रारम्भ में शिखाबन्धन का आदेश दिया है। इसीलिये 'आह्निकतत्त्व' में भी लिखा है-

'गायत्र्या तु शिखां बद्ध्वा नैर्ऋत्यां ब्रह्मरन्ध्रतः। जूटिकां च ततो बद्ध्वा ततः कर्म समारभेत्। निबद्धशिख आसीनो द्विज आचमनं चरेत्। कृत्वोपवीतं सव्यं से वाङ्मनः कायसंयतेः'। बद्ध शिखा कब छोड़नी चाहिये- इस विषय में भी कहा है- 'शौचेऽथ शयने सङ्गे भोजने दन्तधावने। शिखामुक्तिं सदा कुर्यादित्येन्मनुरब्रवीत्'। शौच-शयन आदि के समय उसे खोल देना चाहिये।

जबकि सब सम्प्रदायों में कई साम्प्रदायिक चिन्ह नियत दिखाई देते हैं; उनका विशेष प्रयोजन न होने पर भी उन्हें वे छोड़ते नहीं; तब शिखा को ही क्यों छोड़ दिया जाये? वह शिखा तो प्रयोजनवती भी है, हिन्दुजातीय विशेष चिन्ह भी है। तब उसका त्याग कैसे ठीक हो सकता है? स्वामी दयानन्दजी ने भी कहा है-विद्या (?) के चिन्ह यज्ञोपवीत और शिखा को छोड़कर मुसलमान ईसाइयों के सदृश बन बैठना व्यर्थ है। (सत्यार्थप्र० ११ समु० पृ० २४४)

क्रमशः.....

(गतांक से आगे)

रासपञ्चाध्यायी विमर्श (४)

□ धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

ईश रजाई शीश सबही के।

उतपति थिति लय विषय अमी के।।”

सबके शिर पर ईश्वर की आज्ञा चलती है। उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, विष और अमृत सब पर भगवान का नियंत्रण है। देखिये तो, विष और अमृत दोनों पर भगवान् का नियंत्रण है। अमृत की वर्षा दोनों दलों पर एक समान हुई, रामदल पर भी अमृतवर्षा और रावणदल पर भी अमृतवर्षा, परन्तु उस पर भगवान् का नियंत्रण है। वही अमृत रामदल पर बरसकर वानरों को जिलाने में समर्थ हुआ, और राक्षसदल पर बरस कर भी उसे नहीं जिला पाया। यही तो भगवान का नियंत्रण है।

“सुधावृष्टि भई दोउ दल ऊपर।

जिये भालु कपि नहीं रजनीचर।।”

इसीलिए तो अमृत जयन्त को नहीं बचा पाया। सुधा हुई विष, और विष हनुमान जी को मार नहीं पा रहा है। माता सुरसा के मुख में हनुमान जी प्रवेश कर रहे हैं पर उनका एक बाल बाँका नहीं हुआ।

“बदन पैठि पुनि बाहेर आवा।

माँगा विदा ताहि शिर नावा।।”

देवता रक्षा करते रह गये सब लोगों ने रक्षा की पर क्या भगवान् श्रीकृष्ण से विरोध करके कोई बच पाया? कोई नहीं बचा। स्वर्गलोक तक को उन्होंने जीता और यहाँ भगवान् की इच्छा के विरुद्ध होने पर छोटे से गर्भ के बालक को भी अश्वत्थामा का ब्रह्मास्त्र नहीं मार पाया। यही भगवान् की भगवत्ता है। अर्थात् भगवान् सब कुछ कर सकते हैं। “कर्तुं अकर्तुं

अन्यथा कर्तुं समर्थ ईश्वरः।” उनकी इच्छा से ही जीव का जन्म होता है, उनकी इच्छा से पालन होता है, उनकी इच्छा से संहार हो जाता है। भगवान् क्षणभर में पर्वत को राई बना सकते हैं और राई को पर्वत बना सकते हैं। इसीलिए निरन्तर भगवान् की भगवत्ता का अनुसन्धान करते रहना चाहिए। भगवान् की भगवत्ता को नहीं भूलना चाहिए। जो इतना समर्थ है वह छोटे से काम के वश में होगा क्या? यह तो कहने में भी लज्जा लगनी चाहिए। भगवान् किसी भी मूल्य पर काम के वश में क्यों होंगे? भगवान् असमर्थ क्यों हो गये? इसलिए रासपञ्चाध्यायी भगवान् के यश का प्रतिपादन करती है और श्रीमद्भागवत की रासपञ्चाध्यायी एक संकेत देती है कि ईश्वर की कृपा से व्यक्ति सब कुछ कर सकता है। प्रश्न है भगवान् इतनी गोपियों के साथ क्यों खेलते हैं? इसकी क्या आवश्यकता है? उत्तर बहुत स्पष्ट है- “स एकाकी नारमत्” कोई भी अकेले नहीं खेल सकता। खेलने के लिए तो साथी होना चाहिए तभी तो खेल होता है। यदि खेलने के लिए साथी हो तो उन्हीं के समान होना चाहिए, इसलिए भगवान् ने इन सम्पूर्ण जीवात्माओं को गोपीभाव में बनाया और कहा, चलो तुम हमारे साथ खेलो, आनन्द आयेगा। अब तक तो जीवात्मा काम के साथ खेल रहा था और अब जीवात्मा राम अथवा श्याम के साथ खेलेगा। राम में भी कोई आपत्ति नहीं है। ‘रा’ माने राधा और ‘म’ माने माधव। तो जीवात्मा को अब राम के साथ खेलना है काम के साथ नहीं। इसलिए जीवात्मा और परमात्मा की

अविच्छिन्न, निरुपद्रव, निर्दोष क्रीड़ा ही रासपंचाध्यायी है। अब जीवात्मा को परमात्मा के साथ खेलना है वो भी कब खेलना है? क्या दिन में? नहीं दिन में नहीं रात में। सामान्य व्यक्ति दिन में खेलता है, परन्तु परमात्मा रात में खेलते हैं, क्योंकि उनका सब कार्य जीवों से विलक्षण होता है। रात में कौन जागता है? गोस्वामी जी के श्रीरामचरितमानस में श्रीलक्ष्मण जी ने उत्तर दिया, “यहि जग जाभिनी जागहीं जोगी। परमारथी प्रपंच वियोगी॥” इस जगत की मोहमयी रात में योगी जागते हैं। प्रपंची जीव नहीं जाग सकता। स्वार्थी नहीं जाग सकता और कुयोगी नहीं जाग सकता। इसलिए यहाँ जो भी श्रीकृष्ण भगवान् के साथ खेल रही हैं गोपियाँ उन्हें इन तीनों बातों को अनुसन्धान करना होगा, वे साधारण नहीं हैं, उनका योग पूर्ण हो चुका है इसलिए वे योगेश्वर के साथ आज खेलेंगी। उनका कोई स्वार्थ नहीं है, वे निःस्वार्थ हैं। उनमें परमार्थ पूर्णरूप से परिपक्व हो चुका है। इसलिए परमार्थस्वरूप परमात्मा से आज गोपियाँ खेलेंगी, उनके जीवन में अब कोई प्रपंच नहीं है, वे निष्प्रपंच हो चुकी हैं। प्रपंच का अर्थ है जहाँ पाँचों भूत प्रकर्ष को प्राप्त कर लें। गोपियों के जीवन में अब पृथ्वी की प्रबलता नहीं है। वे पृथ्वी से ऊपर उठ चुकी हैं। उनमें जल की परतंत्रता नहीं है उनका व्यक्तित्व जल के ऊपर चला गया है। वे अग्नि के अधीन नहीं है, अग्नि से ऊपर उठ गई हैं, अग्नि अब उन्हें नहीं जला सकता। उन्हें वायु नहीं उड़ा सकता और वे आकाश से भी ऊपर हैं आकाश उन्हें अब अपने में नहीं समेट सकता। क्योंकि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से तो यह शरीर बनता है। और गोपियाँ अब इस शरीर से ऊपर उठ चुकी हैं। “क्षिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित यह अधम

शरीरा॥” गोपियाँ अब शरीर नहीं हैं, गोपियाँ अब मन नहीं हैं, गोपियाँ अब बुद्धि नहीं हैं, वे तो कह रही हैं,

“अहम् नो शरीरं न चैवेन्द्रियाणि
मनोऽहं न चाहं न बुद्धिर्न चित्तम्।
सदा कृष्णचन्द्रस्यदासोऽहमात्मा
सदा माधवीयो जनोऽहम् जनोऽहम् ॥”

गोपियाँ कहती हैं कि हम तो भगवान की दासियाँ हैं “श्यामसुन्दर ते दास्यः करवाम तवोदितम्” भा.१०/२२/१५ हम आपकी दासियाँ हैं। वे दास्य माँगती हैं वे कहती हैं कि हे बृजिनार्दन! हम आपको जानते हैं। लोग आपको जनार्दन कहते हैं पर हम आपको जनार्दन नहीं कहेंगी। भक्त भी कभी-कभी कुछ ऐसी बातें कह देता है जो बुद्धि से परे हो जाती है। जो किसी शब्दकोष में नहीं मिलती। क्योंकि भक्त का शब्दकोष एक प्रेम का कोष है। सब लोग भगवान को जनार्दन कहते हैं गोपियाँ कहती हैं हम आपको जनार्दन नहीं कहेंगी। क्या कहोगी? गोपियाँ कहती हैं हम आपको बृजिनार्दन कहेंगी। बृजिनार्दन कहोगी! जी हाँ, हम आपको बृजिनार्दन कहेंगी, जनार्दन नहीं कहेंगी, बृजिनार्दन कहेंगी। क्यों बृजिनार्दन कहोगी? बोलीं, जनार्दन का अर्थ “जनानर्दयति” जो दैत्य जनों को कुचल देता है। हमारी दृष्टि में आप जीवों को नष्ट नहीं करते। फिर क्या करता हूँ मैं? गोपियाँ कहती हैं हमारी दृष्टि में तो आप जीवों के पापों को मसल डालते हैं।

“तन्न प्रसीद बृजिनार्दन तेऽङ्घ्रिमूलं
प्राप्ता विसृज्य वसतीस्त्वदुपासनाशाः।
त्वत्सुन्दरस्मितनिरीक्षणतीव्रकामतप्तात्मनां
पुरुषभूषण देहि दास्यम्॥”

क्रमशः.....

श्रीहनुमज्जयन्ती पर विशेष-

श्रीमद्वाल्मीकि रामायण में श्रीहनुमच्चरित्र

□ श्री पं० बालकृष्ण कौशिक (सरदारशहर)

श्री हनुमान जी रामकथा के सर्वप्रथम वाचक हैं वे ऊँचे वृक्ष पर बैठकर भूमि पर बैठी भूमिजा जानकी जी को रामकथा सुनाते हैं-

“राजा दशरथो नाम रथकुंजर वाजिनाम्।

.....

यथारूपां यथावर्णां यथालक्ष्यवतीं च ताम्।

विररामैव मुक्त्वा स वाचं नरपुंगवः॥

(३१/२७१६)

श्री हनुमान जी वक्ता व श्रोता दोनों के रूप में विशिष्ट हैं वे रामकथा वक्ता बनकर जानकी जी को ऊँचे आसन यानी पेड़ पर बैठकर कथा सुनाते हैं। जो शास्त्र मर्यादा के अनुरूप भी है, परन्तु विशिष्ट परिस्थिति वशात् वे प्रभु से गीता अर्जुन के रथ की ध्वजा पर बैठकर सुनते हैं, वहाँ उनका आसन वक्ता से उच्च है, बड़ी सुन्दर लीला है।

वे जानकी जी को परिचय देते हुए अपने को सेवक के रूप में छोटा ही बताते हैं-

अहं रामस्य संदेशाद् देवि दूतस्तवागतः।

वैदेहि कुशलीरामः स त्वां कौशलमब्रवीत्॥

छोटे से वाक्य में सारा राम सन्देश कह दिया।
वाल्मीकि का भाषा सौष्ठव यहाँ उल्लेखनीय है।

हनुमान जी जानकी जी को अपनी पीठ पर बैठाकर श्रीराम से मिलाने हेतु भी तत्पर हैं, परन्तु जानकी जी मना कर देती हैं-

पृष्ठमारोह मे देवि मा विकांक्षस्व शोभने।

योग मन्विच्छ रामेण, शशांकेनेव रोहिणीम्॥

जानकी जी द्वारा हनुमान के अल्पकाय होने की शंका करने पर-

कथं चाल्पशरीरस्त्वं मामितो नेतुमिच्छसि।

सकाशं मानवेन्द्रस्य भर्तुमे प्लवगर्षभ॥

मेरुमन्दरसंकाशो बभौ दीप्तानलप्रभः।

अग्रतो व्यवतस्थे च सीताया वानरर्षभः॥

तब हनुमानजी ने मन्दराचल पर्वत के समान अपना रूप दिखाकर जानकी जी को आश्चस्त किया। जानकीजी ने श्रीराम के अलावा स्वेच्छा से परपुरुष स्पर्श को अस्वीकार कर दिया।

सीताजी का पता लगाने बाद हनुमानजी ने पुनः दूतकौशल का अद्भुत, अतुल्य परिचय दिया। दूत का कार्य शत्रु की शक्ति, सेना, बुद्धि का भी पता लगाना होता है, इस हेतु उन्होंने विचार किया कि राक्षसों का साम, दाम व भेद नीति से पता नहीं लगाया जा सकता दण्ड नीति से ही अशोक वाटिका विध्वंस कर इन्हें उद्धेलित करना चाहिए। अतः पराक्रम दिखाकर इनके बल का पता लगाऊँ।

न साम रक्षःसु गुणाय कल्पते,

न दानमर्थोपचितेषु भुज्यते।

न भेदसाध्या बल दर्पिता जनाः

पराक्रमस्त्वेष ममेह रोचते॥

“ग्रहणेचापिरक्षोमिः मदन्येगुणदर्शनम्,
राक्षसेन्द्रेण संवादस्तस्माद्ग्रहन्तुमां परे”

श्रीराम द्वारा हनुमान को आलिंगन दान

हनुमान जानकीजी के तेजोमय तपस्विनी स्वरूप का, श्रीराम विरहाग्निदग्ध उज्ज्वल, निर्मल, पतिव्रता स्वरूप का वर्णन करते हुए अपनी सूझ-बूझयुक्त वाणी द्वारा धैर्य प्रदान की वार्ता श्रीराम से बड़ी विनम्रता से कहते हैं-

ततो मया वाग्भिरदीनभाषिणी
शिवाभिरिष्टाभिरभिप्रसादिता ।
उवाह शान्तिं मम मैथिलात्मजा
तवातिशोकेन तथातिपीडिता ॥

(सुन्दर २९/६८)

श्रीराम कहते हैं कि जो कार्य हनुमान तुमने किया है वैसा भूमण्डल पर अन्य कोई मन से भी सोच नहीं सकता, मेरे पास रण क्षेत्र में और कुछ नहीं है, मैं मेरा परमफलदायक आलिङ्गन तुम्हें प्रदान करता हूँ।

कृतं हनुमता कार्यं, सुमहद् भूवि दुर्लभम् ।
मनसापि यदन्येन न शक्यं धरणी तले ॥
एष सर्वस्व भूतस्तु परिष्वङ्गो हनुमतः ।
मयाकालमिमं प्राप्य दत्तस्तस्य महात्मनः ॥

(युद्धकाण्ड पंचमसर्ग)

राक्षस संग्राम में हनुमानजी का मंगल घोष व आत्मविश्वास महाकवि ने बड़े ओजपूर्ण शब्दों में निरूपित किया है:

जयत्यतिबलो रामो लक्ष्मणश्च महाबलः
राजा जयति सुग्रीवो राघवेणाभिपालितः ॥
दासोऽहं कौसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः
हनूमान् शत्रुसैन्यानां निहन्ता मारुतात्मजः ॥
न रावणसहस्रं मे युद्धे प्रतिबलं भवेत्
शिलाभिश्च प्रहरतः पादपैश्च सहस्रशः ॥
अर्दयित्वा पुरी लंकामभिवाद्य च मैथिलीम्
समृद्धार्थो गमिष्यामि मिषतां सर्वरक्षसाम् ॥

वे रावण को भयभीत करते हुए कहते हैं कि साक्षात् इन्द्र भी राम विमुख होकर सुखी नहीं हो सकता-

अपकुर्वन् हि रामस्य साक्षादपि पुरन्दरः ।
न सुखं प्राप्नुयादन्य किं पुनस्तद्विधोजनः ॥

कविकोकिल ने राक्षसों द्वारा हनुमान जी की पूँछ में आग लगाने पर उनकी पूँछ के परकोटे को सूर्यमण्डल के समान बताते हुए बड़ी सुन्दर शब्दावली प्रयुक्त की है।

स तान् निहत्वा रणचण्डविक्रमः
समीक्षमाणः पुनरेव लंकाम् ।
प्रदीप्त लांगूल कृतार्चिमाली
प्रकाशितादित्यइवार्चमाली ॥

अग्नि की ज्वाला मालारूपी पूँछ से हनुमान जी सूर्यमण्डल की आभा से सुशोभित हो रहे हैं।

वाल्मीकि के हनुमान जी अपने युद्ध बल पराक्रम से वानरों में भी श्रेष्ठतम वीर के रूप में पूज्य हैं, उन्होंने अकम्पन, धूम्राक्ष, अक्षय आदि अनेक वीरों का स्वयं वध किया एवं रावण को भी मुक्का मारकर घायल कर दिया था।

राक्षस संग्राम में राक्षस वीरों को मारने पर-
वानराणामधीशं हनुमान जी (कपीश)

स तु पवनसुतो निहत्य शत्रुन् क्षतजवहाः सरितश्च संविकीर्य
रिपुवधजनितश्रमो महात्मा मुदमगमत् कपिभिः सुपूज्यमानः ।
स वीर शोभामभजन्महाकपि समेत्य रक्षांसि निहत्यमारुतिः
महासुरं भीमनमित्रनाशनं विष्णुयथैवोरुबलं चमूमुखे ॥

राक्षसवीरों को मारने पर हनुमान जी वानरदल में कैसे सुशोभित हो रहे हैं जैसे देवसभा में भगवान् विष्णु सुशोभित होते हैं।

रावण भी मुष्टिप्रहार से भूमि पर गिरकर चक्कर खाने लगा-

ततः क्रुद्धो वायुसुतो रावणं समभिद्रवत् ।
आजघानोरसि क्रुद्धो वज्रकल्पेन मुष्टिना ॥
तेन मुष्टि प्रहारेण रावणो राक्षसेश्वरः ।
जानुभ्यामगमद् भूमौ चचाल च पपात च ॥

(५९-११४-११५)

रावण भी हनुमानजी के बल पराक्रम की प्रशंसा करता है

“साधु वानर वीर्येण, श्लाघनीयोऽसि मे रिपुः”

वाल्मीकि जी के युद्ध काण्ड में तो श्रीराम हनुमान जी को गरुड़ की तरह युद्ध वाहन बनाते हैं, हनुमान जी बड़े वेग से राम जी को अपने कन्धों पर बैठाकर रावण से युद्ध करते हैं

मम पृष्ठे समारूढ्य राक्षसं हनुमत्तं महाकपिम्

(१२५-५९-युद्ध)

इस प्रकार वाल्मीकि रामायण में हनुमान जी परम स्वामिभक्त, भक्त शिरोमणि एवं सेवाधर्म के प्रेरणास्त्रोत आदर्श पुरुष हैं।

महर्षि अगस्त्य से भगवान श्रीराम स्वयं हनुमान जी की प्रशंसा में कहते हैं- बालि और रावण अतुल बली थे, परन्तु दोनों भी बल में हनुमान जी के समकक्ष

नहीं थे। मैं तो स्पष्ट घोषणा करूँगा कि हनुमान की भुजाओं के बल से मैंने लंका विजय की, सीता को प्राप्त किया, राज्य, लक्ष्मण, भरत आदि भाई एवं सुग्रीव, विभीषण जैसे मित्रों को पाया। वस्तुतः वाल्मीकि के हनुमान शौर्य के सागर, असीम बलवान व बुद्धिमान, वेश परिवर्तन कुशल दूत, राजनीतिज्ञ, सुन्दर वाक्पटु वक्ता, कर्तव्यनिष्ठ स्वामिभक्त सेवक हैं।

सारांशतः वाल्मीकि रामायण के हनुमच्चरित्र में हनुमान जी महावीर, अतुलित बलवान, सुमतिवान् सचिव, नीतिज्ञदूत, स्वामिभक्त, वाक्निपुण, वेदव्याकरणभाषाविद्वान्, ब्रह्मचारी, चरित्रवान्, रामभक्त, सुग्रीव हितैषी, जानकी शोकविनाशक, राक्षसकुल भय कर्ता एवं निर्भीक योद्धा हैं। वाल्मीकि रामायण में उनका परम उदात्त चरित्रचित्रण हुआ है।

‘बर्हापीडं’ गाने को

(नैमिष तीर्थ में आशु रचना)

□ पूज्यपाद जगद्गुरु जी

बर्हापीडं गाने को जी चाहता है।
बर्हापीडं गाने को जी चाहता है॥
भागवत के श्लोकों में राधा जी रमत हैं।

राधा को मनाने को जी चाहता है॥

बर्हापीडं

बर्हापीडं में राधेश्याम जी रमत हैं।

उनको मनाने को जी चाहता है॥

बर्हापीडं

बर्हापीडं श्लोक में भक्ति बसत है।

भक्ति को पाने को जी चाहता है॥

बर्हापीडं

बर्हापीडं श्लोक में युगल छवि बसत है।

युगल को रिझाने को जी चाहता है॥

बर्हापीडं

बर्हापीडं रामभद्र जी को सरवस

नाच नाच गाने को जी चाहता है।

बर्हापीडं

सर्वस लुटाने को जी चाहता है।

बार बार गाने को जी चाहता है।

बर्हापीडं

प्रस्तुति-श्रीमती मधु शर्मा

परमपूज्य गुरुदेव के श्रीमुख से (श्री नैमिष तीर्थ में दिव्य श्रीमद्भागवत कथा)

□ आचार्य दिवाकर शर्मा

ज्ञातव्य है कि इस बार १९ सितम्बर से २७ सितम्बर २००९ तक अठासी हजार ऋषियों की तपस्थली एवं श्री मनु शतरूपा जी के तप से परमपुनीत नैमिष तीर्थ में ही सूत जी ने १००० वर्षों का सत्र चलाया था और ऋषियों को समस्त पुराण सुनाये थे। यमराज को भी उस सत्र में यजमान बनाया गया था और यमराज से कहा था कि १००० वर्ष तक किसी की मृत्यु नहीं होनी चाहिए।

परमपूज्य जगद्गुरु जी महाराज ने नवदिवसीय श्रीमद्भागवत कथा आरम्भ मंगलाचरण से इस प्रकार किया-

नमस्यामः शुकाचार्यं वासिष्ठं व्याससम्भवम्।
पिबामो यन्मुखाम्भोजच्युतं भागवतामृतम्॥
शुकाचार्य के पद कमल पुनि पुनि करौं प्रणाम।
श्रीमद् भागवती कथा कहौं सुजन अभिराम॥
वृन्दावन के लतन को मरम न जाने कोय।
जहाँ डाल डाल अरु पात पात पै राधे राधे होय॥

भगवान की कृपा से ही जीव का कल्याण होता है। सामान्य रूप से श्रुति कहती है- ऋते ज्ञानात्र मुक्तिः अर्थात् ज्ञान के बिना मुक्ति सम्भव नहीं है। परन्तु श्रीमद्भागवत में कहा गया है- भक्त्या विमुच्येन्नरः अर्थात् मनुष्य की मुक्ति भक्ति से होती है। नारद जी और विश्वामित्र जी महान ज्ञानी थे पर विश्वमोहिनी और मेनका के मोह में पड़ गये। दूसरी ओर हनुमान जी को निरन्तर अप्सरायें रामायण सुनाती हैं पर वे मोहित नहीं होते। क्योंकि मानस जी में कहा गया है-

रघुपति बिमुख जतन करि कोरी।

कवन सकइ भव बन्धन छोरी॥

यही बात श्रीविनयपत्रिका में गोस्वामिपाद पुनः कहते हैं-

वाक्य ज्ञान अत्यन्त निपुन

भवपाद न पावै कोई।

निसि गृहमध्य दीप की बातन्ह

तम निवृत्त नहि होई॥

रघुपति भगति वारि छालित चित

बिनु प्रयास ही सूझै।

तुलसिदास कह चिद्विलास जग

बूझत बूझत बूझै।

अर्थात् जिस प्रकार रात्रि में दीपक की बातें करने से अन्धकार दूर नहीं होता जैसे ही कोई कितना भी ज्ञानी हो वह भक्ति के बिना संसार सागर को पार नहीं कर सकता। हमारे मन के विकार तो तभी छूटेंगे जब श्रीरघुनाथ जी की भक्तिरूपी जल से धुलकर चित्त निर्मल होगा तब अनायास ही उस चैतन्य के विलास रूप जगत का सत्य तत्त्व समझते समझते ही समझ में आयेगा। विवेक चूड़ामणि में भी इसी सत्य का प्रतिपादन किया गया है-

मोक्षसाधन सामग्र्यां भक्तिरेव गरीयसी।

अर्थात् मोक्ष के सभी साधनों में भक्ति ही सबसे महान है। नारद भक्ति सूत्र में भी सात्वस्मिन् परमप्रेमरूपा कहकर ही भक्ति का महत्व दर्शाया गया है। भक्ति रसायन में श्री मधुसूदन सरस्वती जी ने भी कहा है कि धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पुरुषार्थ नहीं हैं? तो पुरुषार्थ

क्या है? इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा भगवान के चरणों में अविरल भक्ति ही परम पुरुषार्थ है? भक्ति स्वयं रस है। जीव की तीन योनि हैं- देवयोनि, मनुष्य योनि और तिर्यक् योनि। भगवान श्रीराम ही हमारे परमदेवता हैं। गोस्वामी जी कहते हैं-

तुम कहँ भरत कलंक यह हम सब कहँ उपदेश।
राम भगति रस सिद्धि हित भा यह समय गणेश॥

हे भरत! यह राम बनवास की घटना तुम्हारे लिए कलंक और हम सबके लिए उपदेश है। क्योंकि हम साधु होकर भी एक छोटी सी कुटिया नहीं छोड़ सकते। यहाँ तो श्रीराम ने तुम्हारे लिए राज्य छोड़ा और तुमने श्रीराम जी के लिए। श्रीराम भक्ति रस सिद्धि के लिए यह समय गणेश बन गया है अर्थात् जिस प्रकार गणेश जी सम्पूर्ण विघ्नों को नष्ट कर देते हैं उसी प्रकार यह रामबनवास का समय श्रीराम भक्ति के रसत्व की सिद्धि में आने वाले सम्पूर्ण विघ्नों को नष्ट करता रहेगा। श्री गुरुदेव ने आगे प्रवचन में कहा कि भक्ति पृथक् रस है। गोस्वामी जी महाराज ने रसों की दो श्रेणियाँ मानी हैं सामान्य रस, विशेष रस। विशेष रस में उन्होंने भक्तिरस, प्रेमरस वत्सल रस को स्वीकार किया है। गोस्वामी जी महाराज मानस जी में वर्णन करते हैं-

रामचरित जे सुनत अघाहीं।

रस बिशेष जाना तिन नाहीं॥

श्रीमद् भागवत जी का प्रतिपाद्य भगवत् प्रेम है। स्वार्थयुक्त ममता प्रेम या प्यार हो सकता है परन्तु भगवान में निस्स्वार्थ प्रेम हो तो वह परमप्रेम या भक्ति है। मानस जी में कहा भी गया है-

मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह।
ताकर सुख सोइ जानइ परानन्द सन्दोह॥

ब्रजांगनाओं की भगवद् भक्ति भी निस्स्वार्थ प्रेम स्वरूपा है। वे गोपीगीत में श्रीकृष्ण से कहती हैं-

यत्ते सुजात चरणाम्बुरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु।
तेनाटनीमटसि तद् व्यथते न किंस्वित्
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवतायुषां नः॥

तुम्हारे चरण कमल से भी सुकुमार हैं उन्हें हम अपने कठोर स्तनों पर भी डरते डरते बहुत धीरे से रखती हैं कि कहीं उन्हें चोट न लग जाय। वन में भ्रमण करते समय क्या कंकड़ पत्थर लगने से उनमें पीड़ा नहीं होती? हमें तो इसकी कल्पना मात्र से ही चक्कर आ रहा है। हे श्यामसुन्दर! हमारा जीवन तुम्हारे लिए है हम तुम्हारे लिए ही जी रही हैं। भक्त शिरोमणि हनुमान जी भी प्रथम दर्शन में प्रभु श्रीराम से विनय करते हुए पूछ रहे हैं-

कठिन भूमि कोमल पर गामी।

कवन हेतु विचरहु बन स्वामी॥

मृदुल मनोहर सुन्दर गाता।

सहत दुसह बन आतप बाता॥

हमारी सम्पूर्ण ममताओं के केन्द्र भगवच्चरणारविन्द हैं। जिस प्रकार छोटे बालक से प्रेम में हम कुछ नहीं चाहते उसी प्रकार हम भगवान से निस्स्वार्थ प्रेम करें। श्रीमद् भागवत कथा की चर्चा को आगे बढ़ाते हुए पूज्यपाद जगद्गुरु जी ने कहा कि धर्म के तीन भेद हैं प्रवृत्तिलक्षण धर्म, निवृत्तिलक्षण धर्म और प्रपत्तिलक्षण धर्म। धर्म भागवत जी की शरण में आया। सन्तों के संस्मरणों की तालिका ही श्रीमद् भागवत है। पहला संस्मरण शुकाचार्य जी का भगवान श्रीराम जी से प्रारम्भ होता है-

यस्यामलं नृपसदस्सु यशोऽधुनापि
गायन्त्यघघ्नमृषयो दिगिभेन्द्रपट्टम्।
तं नाकपाल वसुपाल किरीटजुष्ट
पादाम्बुजं रघुपतिं शरणं प्रपद्ये॥

भगवान शुकाचार्य जी राजा परीक्षित को भगवान श्रीराम की यशोगाथा वर्णन करते हुए कहते हैं कि भगवान श्रीराम का निर्मल यश समस्त पापों को नष्ट करने वाला है। वह इतना विस्तृत है कि दिग्गजों का श्यामल शरीर भी उनकी उज्ज्वलता से चमक उठता है आज भी बड़े बड़े ऋषि महर्षि राजाओं की सभा में उसका गान करते हैं। स्वर्ग के देवता और पृथ्वी के नृपति अपने सुन्दर किरीटों (मुकुटों) से भगवान श्रीराम के चरण कमलों की सेवा करते रहते हैं। मैं (शुकाचार्य) उन्हीं रघुवंश शिरोमणि भगवान श्रीरामचन्द्र की शरण ग्रहण करता हूँ। भगवान शुकाचार्य के जन्म की चर्चा करते हुए पूज्यचरणों ने बताया कि शुकाचार्य माता पिंगला के गर्भ में बारह वर्ष रहे। उनके पिता भगवान वेदव्यास ने जब उनसे बाहर आने की प्रार्थना की तो उन्होंने शर्त रखी कि मैं भगवान श्रीकृष्ण के समक्ष ही आऊँगा। भगवान श्रीकृष्ण प्रकट हुए शुकाचार्य जी गर्भ से बाहर आये और दर्शन करके तुरन्त वन को चल पड़े।

महर्षि वेदव्यास जी ने प्रथम वसन्ततिलका छन्द में बहुत सुन्दर वर्णन किया है। नैमिषारण्य में सूत जी कथा सुनाते हुए कहते हैं-

यं प्रव्रजन्तमनुपेतमपेत कृत्यं
द्वैपायनो विरह कातर आजुहाव।
पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदु-
स्तं सर्वभूतहृदयं मुनिमानतोऽस्मि।।

अनुपेतम् - माता का दूध पीने नहीं गये, अपेतकृत्यं-जिनके सारे कृत्य समाप्त हो गये हैं ऐसे शुकाचार्य जी के जाते ही माता का प्राणान्त हो गया। व्यास जी भी अब द्वीप में कुटिया बनाकर रहने लगे अतः द्वैपायन हो गये। राजा गोपीचन्द का प्रसंग सुनाते हुए पूज्य गुरुदेव ने कहा कि जब राजा गोपीचन्द ने संन्यास में जाने से पहले माता से आज्ञा माँगी और

कहा कि अब मैं आपके ऋण से भी मुक्त हूँ तब माता ने कहा कि मेरे ऋण से मुक्त तभी हो सकते हो जब गूलर के दूध से सात तालाब भरो और दसों नाखूनों में २१-२१ लोहे की कील चुभाओ। गूलर के दूध से एक तालाब भरा गया और एक नाखून में लोहे की कील चुभाई तो चिल्लाने लगे। भाव यह है कि व्यक्ति माता से कभी उर्ऋण नहीं हो सकता। किन्तु शुकाचार्य जी कहते हैं कि माता का दूध पीऊँगा तभी तो ऋण होगा। उपवीत होने के लिए पिता के पास नहीं गये, विद्याध्ययन हेतु गुरु के पास नहीं गये खेलने के लिए मित्रों के पास नहीं गये अतः सबके ऋण से मुक्त होकर वन में चले गये। मनुशतरूपा के तप की चर्चा करते हुए पूज्यचरणों ने बताया कि इसी पवित्र भूमि नैमिष तीर्थ में मनुशतरूपा ने २३ हजार वर्ष तक तप किया था। तब उन्हें

भृकुटि विलास जासु जग होई।

राम बाम दिशि सीता सोई।।

भगवान श्रीसीताराम जी के दर्शन हुए। भगवान का अवतार वैदिक धर्म की रक्षा के लिए ही होता है। एक ही स्वरूप राम और कृष्ण दो रूपों में प्रकट होता है। भक्त के प्रति भगवान का कितना प्रेम है वे भक्त के लिए किसी भी सीमा तक जा सकते हैं। वेदों में कहा गया है- भक्तिवश्यो हि पूरुषः। वश धातु कान्ति के अर्थ में होती है और कान्ति माने इच्छा अर्थात् भक्त जैसी इच्छा करता है भगवान स्वयं को भक्त की इच्छानुसार ढाल लेते हैं। भगवान की तो कोई इच्छा ही नहीं होती। वे तो- 'निज इच्छा निर्मित तनु' हैं। निज इच्छा में षष्ठी तत्पुरुष समास है। निजानां इच्छा अर्थात् अपने भक्तों की इच्छानुसार शरीर धारण करते हैं। कथा का मर्म समझाते हुए पूज्यपाद जगद्गुरु जी महाराज ने कहा कि हमारा वाच्य संसार है, लक्ष्य भगवान है और व्यंग्य भगवत्प्रेम है। गोस्वामी जी

महाराज ने कहा भी है-

सब कर फल रघुपति पद सेवा।

अर्थात् सभी साधनों का फल भगवच्चरणों में प्रेम है। प्रेम माने ममता। सुन्दरकाण्ड में वर्णन है-

जननी जनक बन्धु सुत दारा।

तन धन भवन सुहृद परिवारा।।

सब कै ममता ताग बटोरी।

मम पद मनहिं बाँधि बरि डोरी।।

ममता माने यह घर मेरा है। जबकि-

हम तो हमारे राघव जू के

राघव जू हमारे हैं।

हमारी सारी ममताएँ राम जी में ही सिमट जायें तभी हमारा जीवन धन्य होगा। जहाँ भगवान का प्रवेश होगा वहाँ समस्त ऋद्धि सिद्धि स्वयमेव आजायेंगी। जय विजय और चारों बालकों (सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार) के प्रसंग की चर्चा करते हुए पूज्य आचार्यश्री ने समझाया कि जय विजय को सेवा का अहंकार हो गया तभी उन्होंने चारों सन्त बालकों को प्रताडित किया और भगवद्दर्शन से रोका जब बालकों ने शाप दिया तो जय विजय ने सोचा कि सुदर्शन चक्र से इनका शाप नष्ट कर देंगे। तब तक शाप स्वयं शस्त्र धारण करके आ गया और जय विजय कुछ न कर सके और उन्हें शाप के वशीभूत होकर राक्षस योनि में जाना पड़ा।

पुरुष (जीवात्मा) और प्रकृति के सम्बन्ध में गम्भीर चर्चा करते हुए गुरुदेव ने समझाया कि पुरुष ने जब प्रकृति को देखा तो वह मोहित हो गया। जब वह प्रकृति को छोड़ेगा तभी मुक्त होगा। जीवात्मा प्रकृति को कैसे छोड़े? इसके उत्तर में आचार्यचरणों ने बताया कि प्रभु की भक्ति ही जीव को प्रकृति (माया) के बन्धन से मुक्त करा सकती है। श्रीराम के चरणों में आँसू गिरते ही जीव सबसे मुक्त हो जाता

है। हमारा शरीर मन्दिर बने तभी यह सम्भव है। श्रीमद् भागवत में कहा भी गया है-

यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम्

अर्थात् जो सदैव आपका नाम आपके लिए लेते रहते हैं उनकी भक्ति प्रशस्य है। ज्ञान से साधक भगवान के निकट तो आ जाता है पर योगमाया का आँचल उसे ढक लेता है परन्तु योगमाया के आँचल को हटाकर जो शक्ति भगवान को प्रकट कर देती है उसी का नाम भक्ति है।

श्रीगीता जी में कहा भी गया है-

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः।

श्रीमद्भागवत में भक्ति के तीन साधनों का वर्णन है-

कथा श्रवण, सन्तों की संगति और नाम जप।

कथा श्रवण से निरन्तर सन्तों के सत्संग से तथा निरन्तर प्रभु का नाम जप भक्ति को बढ़ाता है। निरन्तर सत्संग से कुसंग भी छूट जाता है। गोस्वामी जी महाराज ने श्री विनयपत्रिका में वर्णन किया है कि-

भवसागर कहँ नाव शुद्ध सन्तन के चरन।

तुलसिदास प्रयास बिनु मिलहिं राम दुखहरन।।

सन्त सुधार करते हैं भगवान उद्धार करते हैं।

जिस प्रकार सावन भादों में वर्षा होती है उसी प्रकार रामनाम जप से भक्तिरूप वर्षा होती है। भक्ति के चार भेद हैं- अविरला, प्रेमा, निर्भरा और अनपायिनी। जीवन में यम नियम का उतना महत्व नहीं है जितना निर्मल हृदय से भक्ति का है। नारद जी की दिनचर्या का वर्णन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ने बताया कि नारद जी चौबीस मिनट से अधिक कहीं नहीं रुकते थे। इसका कारण यह था कि दक्ष जी का उन्हें शाप लगा क्योंकि नारद जी ने दक्ष के दस हजार पुत्रों को प्रवृत्ति मार्ग से हटाकर निवृत्तिमार्ग में लगा दिया था।

थकने पर नारद जी चार स्थानों में विश्राम करते हैं— श्रीचित्रकूट, श्रीअयोध्या जी, श्रीवृन्दावन और श्रीद्वारका जी। भगवान श्रीसीताराम जी और श्रीराधागोविन्द जी की भक्ति जीव के पाँचों कोशों को जला देती है। जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि जीव पाँच कोशों में बँध जाता है— अन्नमय कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश, विज्ञानमय (बुद्धि) कोश और आनन्दमय कोश। जीवात्मा इन्हीं पाँच कोशों में आनन्द लेता रहता है। पाँचों कोशों के नष्ट हो जाने पर भक्ति जीवात्मा को पाँच आनन्द देती है— सदानन्द, चिदानन्द, परमानन्द, ब्रह्मानन्द और प्रेमानन्द। भगवान के भजन गाना अच्छा है ये गीत भगवान के भजन के साधन हैं परन्तु स्वर भी पावन होना चाहिए। अविद्या के पाँच प्राणों को भगवान अपने ऐश्वर्य से अज्ञान को, धर्म से तन को, यश से मोह को श्री से महामोह को ज्ञान से तामिस्र को और वैराग्य से अन्ध तामिस्र को नष्ट कर देते हैं। हमें कैसे पता चले कि हममे भक्ति आ रही है? इसका बहुत सुन्दर समाधान बताते हुए परमाराध्य परमपूज्य गुरुदेव ने कहा कि जब भगवान के समक्ष दैन्य निवेदन करते हुए हमारे नेत्रों से अविरल अश्रुधारा बहने लगे हमारे रोंगटे खड़े हो जाये तब समझो कि हममें भक्ति का उदय हो रहा है। वैष्णव जन मुक्ति नहीं माँगते वे तो केवल भगवान के श्रीचरणों में भक्ति चाहते हैं। भक्ति प्राप्त करने के उपाय का वर्णन करते हुए श्रीमद् भागवत में भगवान श्रीकृष्ण स्वयं कहते हैं—

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं
प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम्।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं
पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा॥

यह मानव शरीर समस्त शुभ फलों की प्राप्ति का मूल कारण है और अत्यन्त दुर्लभ होने पर भी

भगवत्कृपा से अनायास सुलभ हो जाता है। इस संसार सागर से पार जाने के लिए यह एक सुदृढ नौका है। शरण ग्रहण मात्र से ही गुरुदेव इसके केवट बनकर पतवार का संचालन करने लगते हैं और स्मरण मात्र से ही मैं अनुकूल वायु के रूप में इसे लक्ष्य की ओर बढ़ाने लगता हूँ। इतनी सुविधा होने पर भी जो मानव शरीर के द्वारा संसार सागर का पार नहीं होता वह तो अपने हाथों अपनी आत्मा का हनन अर्थात् स्वयं का अधःपतन कर रहा है।

श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध को गुरुदेव ने श्रीरामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड के समान बताया। अन्त में श्रीमद्भागवत के इस श्लोक से पूज्यचरणों ने कथा को विश्राम दिया—

तदेव रम्यं रुचिरं नवं नवं
तदेव शश्वन्मनसो महोत्सवम्।
तदेव शोकार्णव शोषणं नृणां
यदुत्तमश्लोक यशोऽनुगीयते॥

जिन वचनों से भगवान के परमपवित्र यश का गान होता है वही परमरमणीय और रुचिकर होते हैं। उन वचनों (कीर्तन आदि) से अनन्तकाल तक मन को परमानन्द की अनुभूति होती रहती है। मनुष्यों का सारा शोक चाहे वह समुद्र के समान गहरा और लम्बा हो भगवान के कीर्तन भजन के प्रभाव से सदा के लिए सूख जाता है। अन्त में पूज्यचरणों ने सार रूप में निम्न वाक्य कहे—

१. अच्छी बातें सबसे सीखो।
२. भगवान को प्रसन्न करने का उपाय सन्तों का संग है।
३. भगवद् भक्ति ही भगवान को प्राप्त करने का साधन है।
४. भगवत्प्राप्ति में सहायक गुरुदेव ही हैं।
५. मरण को शुद्ध करने के लिए भगवान का स्मरण करो।

□□□

रामनामजपतां कुतो भयम्

□ आचार्य डॉ० श्रीजयमन्त जी मिश्र

राम नाम एक महामन्त्र है। यह आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक-इन त्रिविध तापों का शमन करता है। जीवन की गुरुतर समस्या और गम्भीर चिन्ता से मुक्त करने वाला यह एक चिन्तामणि तथा मनोऽभिलषित फल देने वाला कल्पतरु है।

भक्तशिरोमणि प्रह्लाद को प्राणान्तक यातनाएँ दी जा रही थीं। उनका कोई प्रभाव भक्त प्रह्लाद पर नहीं पड़ रहा था। इससे चकित दैत्यराज हिरण्यकशिपु से उन्होंने कहा था-

रामनामजपतां कुतो भयं
सर्वतापशमनैकभेषजम् ।
पश्य तात मम गात्रसंनिधौ
पावकोऽपि सलिलायते यतः।।

राम-नाम जपने वालों को किसी से भय नहीं होता। राम-नाम तो सभी सन्तापों को प्रशमित करने वाला अमोघ भेषज है। देखें पिताजी! प्रचण्ड अग्निका भी प्रभाव मेरे शरीर में श्रीराम-नाम की महिमा से शीतल जल जैसा हो रहा है।

भारतीय वाङ्मय में राम-नाम के बहुत से चमत्कार वर्णित हैं। गम्भीर चिन्ताजनक समस्याओं का समाधान राम-नाम से हो जाता है। इसके अनेक उदाहरण हैं। इस प्रसंग के दो रोचक दृष्टान्त निम्नलिखित हैं-

(१) श्रीराम अपने सैनिकों के साथ शीघ्र लङ्का पर आक्रमण करना चाहते थे। महासागर पार करने

की जटिल समस्या सामने थी। प्रस्तर-खण्डों से सागर में पुल बनाने की योजना बनी; पर गभीर जलराशि को प्रस्तर-खण्डों से भरना सम्भव नहीं था। प्रभु श्रीराम स्वयं बहुत चिन्तित होने की लीला कर रहे थे। भक्तराज हनुमान् को एक उपाय सूझा- 'प्रस्तर-खण्डों' पर राम-नाम लिखकर उन्हें सागर में छोड़ा जाय। राम-नाम की महिमा से प्रस्तर-खण्ड सागर में तैरते रहेंगे। इस तरह आसानी से पुल बन जायगा।' वैसे ही किया गया। राम-नाम लिख-लिखकर प्रस्तर-खण्ड फेंके जाने लगे। वे सभी जल के ऊपर तैरने लगे। पुल का निर्माण आसानी से होने लगा।

श्रीराम के मन में एक विचार आया- 'मेरे भक्त मेरा नाम लिखकर प्रस्तर-खण्डों को जल में फेंकते हैं और वे तैरते ही रहते हैं, डूबते नहीं। यदि मैं स्वयं राम-नाम लिखकर इन्हें जल में डालूँ तो अतिशीघ्र पुल तैयार हो जाय।' पर साथ ही मन में एक संदेह भी हुआ। 'मेरे द्वारा लिखित राम-नाम से अङ्कित प्रस्तर-खण्ड यदि जल में डूब गये तो ...? पहले छुपकर इसकी परीक्षा कर लूँ।' वे किसी बहाने एक झाड़ी की ओर चले। भक्तराज हनुमान् को जिज्ञासा हुई- 'प्रभु अकेले कहाँ जा रहे हैं?' उन्होंने अतिलघु रूप धारणकर प्रभु का अनुसरण किया। झाड़ी के पास जाकर श्रीराम ने चारों ओर देखा। एकान्त समझकर स्वलिखित राम-नाम अङ्कित प्रस्तर-खण्ड को सागर में फेंका। यह क्या, वह खण्ड तो जल में

डूब गया! वे पुनः चारों ओर देखने लगे कि किसी ने देखा तो नहीं! भक्ततवर हनुमान् प्रकट हो गये और बोले- 'प्रभो! ऐसा होना तो सर्वथा उचित ही था। जो भक्त राम-नाम लिखकर प्रस्तर-खण्ड सागर में फेंकेगा, उसे तो तैरना ही है। उसे सागर में तैरना ही है। किंतु आप जिसे अपने हाथों से फेंक दें, उसे तो डूबना ही है। प्रभो! ऐसा तो होना ही था।' प्रभु मुस्कुराने लगे।

(२) दूसरी घटना लङ्का की है। श्रीराम सदल-बल लङ्का पहुँच गये। खर-दूषण और बालि जैसे महाबलियों को मारने वाले श्रीराम से रावण मन-ही-मन सशङ्कित था। सायंकाल का समय था। मन बहलाने के लिये लङ्केश एक पुष्करिणी के तट पर टहल रहा था। उसके सैकड़ों हितैषी सेवक आस-पास घूम रहे थे। उनमें से कुछ सेवकों ने निवेदन किया- 'महाराज! राम असाधारण पुरुष हैं। पत्थरों

पर उनका नाम लिखकर बंदरों ने सागर में फेंका, सब-के-सब तैरते ही रहे और पुल का निर्माण हो गया। वे सदल-बल लङ्कापुर पहुँच आये हैं। क्यों न उनसे सन्धि कर ली जाय?" रावण ने जोर से अट्टहास किया- 'अरे, यह कौन सी बड़ी बात हो गयी? देखो, मैं भी पत्थर पानी में फेंकता हूँ।' उसने एक पत्थर का बड़ा टुकड़ा उठाया। उस पर तर्जनी से कुछ लिखकर पानी में फेंक दिया। वह टुकड़ा भी पानी में तैरने लगा। देखते ही, सभी- 'महाराज की जय हो! लङ्केश की जय हो!!'- के नारे लगाने लगे। नतमस्तक रावण मन्दस्वर में बोला- 'फेंकने के पहले मैंने भी राम-नाम लिखकर मन-ही-मन में कहा था-देखना राम, अपने नाम की प्रतिष्ठा रखना।' रावण चिन्तित हो महल की ओर चल पड़ा। स्पष्टतः राम-नाम की महिमा अपरम्पार है। जो इस नाम का जप करे, फिर भला उसे भय कैसा?

बाँहन में भर लूँगी

(नैमिष तीर्थ में आशु रचना)

□ पूज्यपाद जगद्गुरु जी

बाँहन में भर लूँगी कन्हैया तोहे जाने न दूँगी।
जो मेरे मोहन तुम राजा बनोगे
मैं भी रानी बनूँगी कन्हैया तोहे जाने न दूँगी।
जो मेरे मोहन तुम स्वामी बनोगे।
मैं भी स्वामिनी बनूँगी कन्हैया तोहे जाने न दूँगी।
जो मेरे मोहन तुम ठाकुर बनोगे
मैं भी ठाकुरानी बनूँगी कन्हैया तोहे जाने न दूँगी।
रामभद्र आचारज के मितवा
पल पल बस में करूँगी कन्हैया तोहे जाने न दूँगी।
बाँहन में भर लूँगी कन्हैया तोहे जाने न दूँगी।।

प्रस्तुति-श्रीमती माधवी अग्रवाल

आध्यात्मिक और सांस्कृतिक तीर्थ-श्रीचित्रकूटधाम

□ डॉ० हरप्रसाद दूबे

चित्रकूट एक आध्यात्मिक और सांस्कृतिक तीर्थ है। यह वह पावन धरा है जहाँ सृष्टि के पूर्व विधाता ने यज्ञ अनुष्ठान किया था। इसके अनन्तर यहाँ का स्वामी, शिव को मत्तगजेन्द्र स्वामी नाम प्रदान कर बनाया था। ब्रह्मा, विष्णु और शंकर ने चित्रकूट में दत्तात्रेय, चन्द्रमा और दुर्वासा के रूप में अवतार लिया था। यही वह पवित्र भूमि है जहाँ नारद दक्ष के शाप से मुक्ति पाये थे। भारतीय संस्कृति के इसी पुण्य क्षेत्र में राम ने सीता और लक्ष्मण के साथ वनवास के बारह वर्ष बिताये। पौराणिक, साहित्यिक स्थल चित्रकूट रचनाधर्मी मनीषियों-महर्षियों की सृजन-भूमि है। त्याग, वैराग्य और परम शान्ति का यह सिद्धपीठ कामनाओं की पूर्ति करने वाला कामद कल्पतरु है। राम का जीवन में आना ही चित्रकूट की यात्रा है। यही एक ऐसा तीर्थ है, जहाँ के शिलाखण्डों पर राम, सीता, लक्ष्मण और भरत के पादचिन्ह अभी भी हैं।

चित्रकूट के बिना राम की और राम के बिना चित्रकूट की कथा पूर्ण नहीं होती। चित्रकूट का तात्पर्य है कि चित्रों का पर्वत। चित्रकूट का महत्व वाल्मीकि रामायण, रामचरितमानस और अन्य पुराणों में वर्णित है। चित्रकूट प्राचीनकाल से तपोभूमि के रूप में प्रतिष्ठित है। पयस्विनी नदी के किनारे सीतापुर नामक क्षेत्र ही चित्रकूट नाम से विख्यात है। यह क्षेत्र विराट और सुरम्य है। चित्रकूट के प्रत्येक तीर्थ दूर-दूर तक बिखरे हैं। चित्रकूट का मात्र रामघाट बाँदा जिले में और शेष स्थल मध्य प्रदेश के सतना जिले में हैं। रामघाट पयस्विनी नदी के बायें किनारे स्थित है। यहीं ब्रह्मा

द्वारा सम्पादित यज्ञ की वेदिका भी है। इसी घाट पर गोस्वामी तुलसीदास जी को राम के दर्शन हुए थे। पयस्विनी के पक्के घाटों में राम घाट, कैलास घाट, धृततुल्पा घाट और राघव घाट का स्थान महत्वपूर्ण है।

कामदगिरि चित्रकूट का अलौकिक दर्शनीय स्थल है। इसका दूसरा नाम कामतानाथ प्रसिद्ध है। कामदगिरि दर्शन और परिक्रमा से भक्तों के समस्त मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं। परिक्रमा मार्ग की पूरी दूरी पाँच किलोमीटर है। यह गोलाकार पहाड़ी भगवान का स्वरूप मानी जाती है। इसके ऊपर कोई चढ़ता नहीं। भगवान श्रीराम ने यहाँ निवास किया था। परिक्रमा मार्ग में प्रथम पवित्र स्थल मुखारविन्द अत्यन्त पावन है। इसके अतिरिक्त हनुमान जी साक्षी गोपाल, लक्ष्मीनारायण, श्रीरामजी और तुलसीदास के स्थान, कैकेई और भरत जी के मन्दिर, चरण पादुका और श्रीलक्ष्मण मन्दिर उल्लेखनीय हैं। चरण पादुका स्थान प्रांगण में श्रीराम भरत मिलने के समय पत्थर पर उभर आए चरणचिन्ह दर्शनीय हैं। कामदगिरि के मुखारविन्द स्थल पर ही भगवान कामतानाथ (शिवजी) और राम, सीता-लक्ष्मण का विग्रह स्थापित है। यहीं से परिक्रमा आरम्भ की जाती है और यहीं पूर्ण भी होती है।

कामदगिरि के पार्श्व में लक्ष्मण पहाड़ी है, इस पर लक्ष्मण जी का मन्दिर है। ऐसी आस्था है कि यह स्थान लक्ष्मण को अत्यन्त प्रिय था। वे रात्रि में यहीं बैठकर वनवासकाल में पहरा देते थे। परिक्रमा मार्ग स्थित भरत मिलाप के विषय में आख्यान मिलता है

कि यहीं पर भगवान श्रीराम और भरत का मिलन हुआ था। सीतापुर से पूरक संकर्षण पर्वतमाला पर हनुमान धारा नामक पवित्र स्थल है। यहीं कोटि तीर्थ स्थित है। वहाँ से ऊपर आने पर बाँके सिद्ध, पम्पा सरोवर, सरस्वती नदी (झरना), यमतीर्थ, सिद्धाश्रम, गृधाश्रम (जटायु-तपोभूमि) है। हनुमानधारा बड़ी ऊँची चढ़ाई है। यहाँ पर्वतखण्ड से निकली जल की निर्मल धारा हनुमान जी का अभिषेक करती रहती है। यह कुण्ड में गिरकर पुनः भूमिगत हो जाती है। हनुमान धारा से ऊपर की ओर सौ सीढ़ियों के चलने पर सीता रसोई है। इसी मन्दाकिनी के पावन पुलिन पर अवस्थित है श्रीतुलसीपीठ, आमोदवन। यहाँ श्रीचित्रकूट बिहारी बिहारिणी जू के श्रीविग्रह विराजमान हैं। काँच मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध यह पावन परिसर विश्व के विलक्षण विभूतिपाद श्रीतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज द्वारा स्थापित है। भक्त शिरामणि श्रीहनुमान जी, भगवान् आद्यरामानन्दाचार्य, महर्षि वाल्मीकि एवं गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज के श्रीविग्रह भी यहाँ भव्यता के साथ विराजमान हैं यहीं श्रीरामचरितमानस का ऐसा मन्दिर है जहाँ सम्पूर्ण श्रीमानस जी दीवारों पर उत्कीर्ण हैं। नव्य भव्य यह मन्दिर चित्रकूट का प्रमुख दर्शनीय स्थल है।

यहीं पर ३० प्र० के भूभाग में जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय स्थित है। इसके जीवनपर्यन्त कुलाधिपति एवं संस्थापक स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज ही हैं। विकलांग सेवा के लिए तथा उनका सर्वाङ्गीण विकास करने वाला और निःशुल्क सेवा करने वाला यह विश्व का प्रथम और अनूठा विश्वविद्यालय है। यहाँ लगभग एक हजार

विकलांग राष्ट्र की मुख्यधारा में रहते हैं। आगे जानकीकुण्ड है। पयस्विनी नदी तट पर श्रीजानकी जी स्नान करती थीं। यहाँ स्फटिक पत्थरों पर अनेक चरण चिन्ह अंकित हैं। जानकीकुण्ड से कुछ आगे पयस्विनी तट पर स्फटिक शिला स्थित है। यहीं इन्द्र के पुत्र जयन्त ने कौए का रूप धारण करके सीता जी के चरणों में चोंच मारी थी। यहाँ नदी के बाएँ तट पर श्वेत पत्थर के दो विशालखण्ड हैं। बड़ी शिला पर चरणचिन्ह अंकित हैं। इसी पर राम, सीता बैठे हुए थे। राम ने सीता को पुष्पहार पहनाया था। सुरम्य दृश्य हृदयस्पर्शी और नयनाभिराम है। प्राकृतिक छटा अनूठी है। मन्दिर में राम-सीता और लक्ष्मण का अनुपम श्रीविग्रह है।

अनसूया आश्रम चित्रकूट से १४ किलोमीटर दक्षिण स्थित है। यह स्फटिक शिला से आठ किलोमीटर दूर है। महर्षि अत्रि और अनसूया की तपोभूमि यही है। अत्रि ऋषि की प्यास बुझाने के लिए अनसूया ने अपने तप से पयस्विनी को प्रगट किया था। इस पयस्विनी को ही स्थानीय जनमानस मन्दाकिनी नाम से जानता है। अनसूया आश्रम के सम्मुख पयस्विनी की पतली धारा पर्वत से उतरती दिखाई देती है। मन्दिर के पीछे उच्चता में पर्वत सुशोभित है। पयस्विनी का स्नान और अनसूया मन्दिर का दर्शन माहात्म्ययुक्त है। यहाँ अत्रि, अनसूया, दत्तात्रेय, दुर्वासा, चन्द्रमुनि की प्रतिमाएँ देवालियों में प्रतिष्ठित हैं। घने वन क्षेत्र के मध्य यह स्थल अद्वितीय सौन्दर्य सम्पन्न है।

गुप्त गोदावरी अनसूया आश्रम से लगभग १० किलोमीटर दूर स्थित है। यह निर्मल प्राकृतिक जल स्रोतों से आप्लावित एक विशाल गुफा है। इस गुफा में १५ मीटर भीतर सीताकुण्ड है। गोदावरी गुप्त रूप में इसी गुफा में झरने के रूप में राम सीता के दर्शनार्थ प्रकट हुई थी, ऐसी जनश्रुति मिलती है।

गुप्त गोदावरी का जल कुण्ड में आकर गिरता है। इसके बाद भूमि में समा जाता है। अन्दर अँधेरा होने के कारण वहाँ दीप के साथ जाना होता है। गुफा से आती जलधारा बाहर के दो कुण्डों में गिरकर लुप्त हो जाने के कारण ही इसका नाम गुप्त गोदावरी पड़ गया। इसीलिए तो चित्रकूट दर्शन मात्र करने से मंगल की वृष्टि होती है-

महर्षि सेवितः पुण्यः पर्वतः शुभदर्शनः॥

यावता चित्रकूटस्य नरः शृंगाण्यवेक्षते।

कल्याणानि समाधत्ते न पापे कुरुते मनः॥

चित्रकूट का एक पावन तीर्थ है भरतकूप। यह ऐतिहासिक कूप सड़क मार्ग से कुछ दूरी पर है। अत्रि ऋषि के कहने पर राम राज्याभिषेक के लिए भरत जी द्वारा लाये गये सारे तीर्थों का जल इसी कूप में डाला गया था। यह कूप सर्वतीर्थस्वरूप है। ऋषि अत्रि ने इसे अनादि सिद्धस्थल कहा है “तात अनादि सिद्ध थल एहू। लोपेउ कालविदित नहि केहू।” यहाँ श्रीसीताराम के दो पृथक् देवालय अत्यन्त भव्य हैं। भरतकूप से चित्रकूट लौटने में एक शिलाखण्ड मिलता है जिस पर दो प्राणियों के विश्राम करने का चिन्ह है। दोनों के मध्य में धनुष का चिह्न भी है। ऐसा कहा जाता है कि मर्यादापुरुषोत्तम राम ने जानकी जी के साथ इस शिला पर विश्राम किया था। मध्य में पार्थक्य

के लिए धनुष रखा था। इस शिलाखण्ड का नाम रामशय्या है।

हनुमान धारा के पास सिद्धाश्रम से कुछ दूरी पर मणिकर्णिका तीर्थ स्थित है। इसके मध्य चन्द्र, सूर्य, वायु, अग्नि और वरुण पंच देवताओं का निवास होने के कारण इसे पंचतीर्थ कहा जाता है। यहीं से कुछ दूरी पर ब्रह्मपद तीर्थ भी है। गुप्त गोदावरी के पास ‘मरफा’ प्राचीनकाल में माण्डव ऋषि का आश्रम था। प्राकृतिक छटा हृदयस्पर्शी है। पहाड़ी पर श्री बालाजी का भव्य देवालय है। कई झरने हैं। नीचे पापमोचन सरोवर विद्यमान है। बाँकेसिद्ध प्राकृतिक कन्दरा यहाँ सौन्दर्य से परिपूर्ण है। चट्टान के नीचे निर्मित कक्ष धरातल से एक सौ फीट उच्च है। ऊपर से निर्मल जल का झरना उत्तरी भाग को नहलाता हुआ पर्वत के कक्ष में विलीन होता है। गणेशबाग पेशवा नरेशों की कीर्ति का साक्षी है। इसमें षटकोणी पंच मंदिर है।

प्रभु श्रीराम जानकी से कहते हैं चित्रकूट रमणीक स्थल है-

दर्शनं चित्रकूटस्य मन्दाकिन्याश्च शोभते।

अधिकं पुरवासाच्च मन्ये तव च दर्शनात्॥

चित्रकूट पावन तीर्थ है। यह सृष्टि की पावन धरा है-

अर्थिनामर्थदातारं परमार्थं प्रकाशकम्।

कामिनां कामदातारं मुमूक्षुणां च मोक्षदम्॥



मातर्दण्डय मां प्रचण्डविधिभिर्यष्ट्या मुहुर्भीषय

तूर्णं भर्त्सय धर्षयस्वपदयोः कृत्वा तले पीडय।

कामं ताडय पाणिकञ्जकरजैर्मा देहि मे भोजनं

स्वस्मात् किन्तु पदारविन्दयुगलात्पुत्रं न दूरं कुरु॥

महाकवि स्वामी रामभद्राचार्य कृत श्रीभार्गवराघवीयम् १४/११

॥ नमो राघवाय ॥

धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय कविकुलरत्न श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज की समर्चा में

‘षष्टिपूर्ति’ अभिनन्दनग्रन्थ

दिनाङ्क.....

संरक्षक डॉ० कुमारी गीता देवी मिश्रा (पूज्या बुआ जी) परामर्श मण्डल देवर्षि डॉ० कलानाथ शास्त्री अभिराज डॉ० राजेन्द्र मिश्र आचार्य दिवाकर शर्मा डॉ० श्रीधर वासिष्ठ डॉ० वेम्पटि कुटुम्ब शास्त्री अध्यक्ष श्री राजेन्द्र गोयल ‘मंगलदीप’ उपाध्यक्ष प्रेममूर्ति श्रीप्रेमभूषण जी महाराज श्रीशेषधर शुक्ल श्रीसुशील अग्रवाल ‘कीर्तनिया’ श्रीराजेन्द्र प्रसाद गुप्ता महामन्त्री डा० त्रिभुवननाथ शुक्ल सहमन्त्री श्रीअरविन्द कुमार गर्ग कोषाध्यक्ष श्री सर्वेश कुमार गर्ग संयोजक डॉ० सुरेन्द्र शर्मा ‘सुशील’ सहसंयोजक डॉ० श्रीमती वन्दना श्रीवास्तव	मान्यवर, वेदितव्य है कि वर्तमान हिन्दु समाज के शीर्षस्थ मार्गदर्शक, भारतीय वाङ्मय के चूडान्तमनीषी अलौकिक प्रतिभा तथा स्मृति के अक्षय भण्डार एवं जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ०प्र०) के जीवन पर्यन्त कुलाधिपति पूज्यपाद जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज का आगामी 14 जनवरी 2010 को षष्टिपूर्ति समारोह बहुत भव्यता के साथ चित्रकूट में मनाया जायेगा। इस शुभ अवसर पर श्रीराघव परिवार ने अपने परमाराध्य पूज्यपाद जगद्गुरु जी की समर्चा में “षष्टिपूर्ति” नामक अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करने का निर्णय लिया है। हमारे पूर्ण संज्ञान के अनुसार आपका पूज्यपाद जगद्गुरु जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से बहुत गहरा सम्बन्ध है। श्रीगीता जी में कहे गए ‘मत्परः’ कोटि के ये आचार्यश्री अनूठी विकलांग सेवा, उद्धरणीय राष्ट्रभक्ति, वन्दनीया महाकवित्व शक्ति, रामकथा एवं कृष्णकथा आदि की अद्वितीय प्रस्तुति अदृश्य वैदुष्य एवं अलौकिक शास्त्रीयशेमुषी एवं सनातनधर्मरूप कल्पवृक्ष के प्रति अगाध निष्ठा के कारण भगवद्भक्तों विपश्चितों एवं राष्ट्रपुरुषों द्वारा निरन्तर सम्पूजित हैं। आपसे विनम्र प्रार्थना है कि ऐसे विश्वविलक्षण व्यक्तित्व के विषय में अपना लेख/कविता/संस्मरण अथवा उनका कोई फोटो आदि अन्य उपयोगी सामग्री शीघ्रातिशीघ्र निम्नलिखित पतों में से किसी एक पते पर प्रेषित करने की अवश्य कृपा करें। ज्ञातव्य है कि 15 नवम्बर 2009 तक आपकी प्रेषित सामग्री हमें अवश्य प्राप्त हो जाए। पूर्ण विश्वास है कि आप हमारी प्रार्थना पर अवश्य ध्यान देंगे। □ डॉ० त्रिभुवननाथ शुक्ल 56 अशोकनगर, आधारताल, जबलपुर (म०प्र०) पिन- 482004 □ डॉ० सुरेन्द्र शर्मा ‘सुशील’ शाश्वतम्, डी-255 गोविन्दपुरम् गाजियाबाद (उ०प्र०) उत्तरापेक्षी षष्टिपूर्ति अभिनन्दन ग्रन्थ समिति अध्यक्ष 09871191984 महामन्त्री 09425044685 संयोजक 09868932755 संलग्नक- पूज्यपाद जगद्गुरु जी का अत्यन्त संक्षिप्त जीवन परिचय।
---	--

“पर उपदेश कुशल बहुतेरे”

□ साध्वी विश्वेश्वरी देवी (मानस माधुरी)

श्रीरामकृपाधाम-हरिद्वार

आज वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, समाज में अधिकांशतः व्यक्तियों की स्वभाविक वृत्ति, व्यक्तित्व की अपेक्षा वक्तव्य पर अधिक होती है, “स्व” की अपेक्षा “पर” (गुण-दोष चिंतन पर) होती है। आज प्रत्येक व्यक्ति उपदेशक बनने की अनियंत्रित दिशाहीन दौड़ में शामिल हो रहा है। ऐसे लोग, जिन्होंने कदापि उपदेश की विषयवस्तु के विषय में न चिंतन ही किया है और न कदापि स्वजीवन में स्थान ही दिया है वे ही लोग सामने वाले को उन्मुक्त कण्ठ से उपदेश करते नजर आ रहे हैं। जिनका न कोई शास्त्र स्वाध्याय है, न स्वमौलिक चिंतन वे ही अधिकांशतः वर्तमान में उपदेशक की भूमिका निभा रहे हैं।

वाक्संयम अत्यावश्यक है चूंकि वक्तव्य व्यक्तित्व का आइना (दर्पण) होता है, जैसा हमारा व्यक्तित्व होगा वैसा ही वक्तव्य भी होना चाहिए। क्योंकि आपकी वाणी से उच्चारित त्रुटिपूर्ण शब्द भी, दूसरे व्यक्ति के हृदय को बेध सकता है, अतएव श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण हमें बोलना सिखाते हैं-

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यासनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते॥

गीता (१७-१५)

अर्थात् जो किसी की उद्वेग न करने वाला प्रिय, हितकारक एवं यथार्थ वाक्य है वहीं दूसरों के समक्ष बोलने योग्य है मनसा, वाचा, कर्मणा एक विषय का स्वर्णिम आयाम बनकर रह गया है। भगवान् श्रीराम जी के लिये महर्षि वाल्मीकि जी ने जो लिखा है वह

“रामो द्विर्नाभिभाषते”

अर्थात् श्रीराम जी दो प्रकार की वाणी नहीं बोलते वे जो चिन्तन करते हैं वही वाणी से मुखर होता है

और जो वाणी से उच्चारित होता है वही शरीर द्वारा कर्म का रूप ले लेता है। यही वाणी का सर्वोत्तम फलित रूप है और ये अक्षरशः सत्य हुआ श्रीराम जी के व्यक्तित्व में।

महात्मा एवं दुरात्मा की पहिचान का सर्वश्रेष्ठ स्वरूप भी यही है कि-

“मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।

“मनस्यन्यद् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यद् दुरात्मनाम्॥

अर्थात् मन से वाणी तक आते अति चिन्तन का विषय और वर्ण बदल जायें तथा वाणी से व्यवहार बदल जाये यही दुरात्मा के लक्षण हैं। तथा मनसा, वाचा, कर्मणा एक हो वही महात्मा कहलाता है।

सर्वथा कष्टकारक वृत्ति यही है कि आज के उपदेशक समाज को उपदेश स्वरूप जो बाँट रहे हैं उसे वे अपने ही जीवन में नहीं जी पा रहे हैं। ऐसा ज्ञान ठीक वैसा ही है जैसे कि रेगिस्तानी ऊँट की पीठ पर चीनी के बोरे लदे हों और वहीं ऊँच कड़वी नीम की पत्तियाँ चबा रहा हो उनका ज्ञान ही उनके लिये भार बन गया है। वे उस ज्ञान के आनन्दरूपी मिठास का आनंद नहीं ले पा रहे हैं बल्कि विषय भ्रम रूपी नीम की कड़वी पत्तियाँ खाकर ही प्रसन्न हो रहे हैं इससे ज्यादा कष्टकारक दूसरा क्या हो सकता है।

दूसरों को उपदेश करते समय तो निरा मूढ़ भी महा बुद्धिमान बन जाता है किंतु जब उसी उपदेश के पालन का समय आता है तो फिर समस्त शिष्टताएँ भूलने लगता है यथा-

“परोपदेशवेलायां शिष्टाः सर्वे भवन्ति हि।

विस्मरन्तीह शिष्टत्वं स्वकार्ये समुपस्थिताः॥”

उपदेश नहीं आचरण अत्यंत आवश्यक है जब तक पिता आचरणवान नहीं है तब तक पुत्र को उपदेश करने का अधिकारी नहीं है सनातन शास्त्रों में तो आचार्य अथवा गुरु जब शिष्य की विद्याध्ययन के पश्चात् उसको अन्तिम उपदेश देते हैं तो यही कहते हैं वत्स-

“यानि अस्माकं सुचरितानि,
तानि त्वया सेव्यानि, नो इतराणि।”

अर्थात् हमारे चरित्र में जो तुम्हें अच्छा लगा हो ‘तुम उसी को अपने जीवन में लाना अन्य बातों को नहीं’ कितना उच्चादर्श प्रस्तुत किया है सनातनी आचार्यों ने। किंतु कितने खेद के साथ कहना पड़ता है कि उस उच्चादर्श को वर्तमान के विकसित कहे जाने वाले व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र ने भुला दिया है। वर्तमान में तो जो मुख के सामने मीठा एवं

सुन्दर (मिथ्या प्रशंसा एवं चापलूसी भरा) बोले वही सर्वाधिक अच्छा और हितैषी समझा जाता है। वास्तव में सत्यता यह है कि यदि उपदेश की आवश्यकता है तो सर्वप्रथम आपके मन और जीवन को ही सर्वाधिक आवश्यकता है। जब तक आपकी मानसिकता दूसरों की त्रुटि ढूँढने की होती है तब तक आप अपने अन्दर दोष नहीं देख पाते यदि आपका चिन्तन मात्र यही है कि हम तो पूर्णरूपेण सुधरे हुए हैं केवल सुधरना है तो सामने वाले को तो निश्चितरूपेण आप भी उसी श्रेणी में आते हैं जो कि सन्त चक्रचूड़ामणि कविवर गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी ने श्रीरामचरितमानस में लिखी है कि-

“पर उपदेश कुशल बहु तेरे।
जे आचरहिं ते नर न घनेरे।।”

□□□

पूज्यपाद जगद्गुरु जी के आगामी कार्यक्रम		
□ प्रस्तुति-पूज्या बुआ जी		
दिनांक	विषय	आयोजक तथा स्थान
4 नवम्बर 2009 से 12 नवम्बर 2009 तक	श्रीरामकथा	दन्दरौआ डाक्टर हनुमान मंदिर जिला भिण्ड (म०प्र०) आयोजक- महन्त श्रीरामदासजी महाराज
17 नवम्बर 2009 से 24 नवम्बर 2009 तक	108 श्रीमद्भागवतकथा	श्रीराम जी मंदिर, गोण्डल (गुजरात) महन्त श्रीहरिचरण दास जी महाराज
25 नवम्बर 2009 से 31 नवम्बर 2009 तक	श्रीमद् भगवद् गीता सप्ताह	श्री गीता ज्ञान मंदिर राजकोट (गुजरात) श्रीगीता ज्ञान मंदिर ट्रस्ट एवं जयनाथ हास्पिटल
17 दिसम्बर 2009 से 25 दिसम्बर 2009 तक	श्रीरामकथा	आट्रम लाईन किंग्सवे कैम्प दिल्ली-९ पुरुषार्थी हरि मंदिर निर्माण समिति दिल्ली।

कृपया किसी भी कार्यक्रम में जाने से पूर्व परमपूज्या बुआ जी से सम्पर्क अवश्य करके जायें। कार्यक्रम में परिवर्तन भी हो सकता है।

शहद स्वास्थ्य का अमूल्य खजाना है

□ श्री हरिनारायण 'महाराज'

सन् १९६६-६७ के दौरान परम गोभक्त महात्मा रामचन्द्र 'वीर' महाराज ने लम्बा अनशन किया था। मैंने देखा कि महीनों तक निराहार रहने के बावजूद वीर जी महाराज अधिक निर्बल नहीं हुए। जबकि इसी दौरान एक साधु अनशन के पन्द्रहवें दिन अपनी जीवन लीला समाप्त कर चुके थे।

इस संबंध में पूछने पर श्रीवीर जी ने बताया - आयुर्वेदिक ग्रन्थों में जिस मधु को अमृत की संज्ञा दी गयी है, उसी मधु की कृपा से मैं इतना लम्बा अनशन कर सका हूँ। मैं अनशन काल में औषधि के रूप में प्रतिदिन एक छटाँक (लगभग ६० ग्राम) शहद का सेवन करता रहा।

वीर जी के इस शहद-प्रयोग से मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ और शहद में कौन सी शक्ति छिपी है, इसका अन्वेषण करने लगा तथा जो ज्ञात हो सका वह यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है-

आहार-विशेषज्ञ ने चीनी को स्वास्थ्य के लिए अनुपयोगी तथा हानिकारक बताया है और चीनी के स्थान पर गुड़ या शहद खाने की सलाह दी है। अतः जहाँ तक संभव हो चीनी के स्थान पर शहद का ही सेवन करना चाहिए।

शहद में पोषक तत्व तथा गुण-शहद शक्तिवर्द्धक, स्वास्थ्यप्रद और औषधीय गुणों से युक्त प्रकृतिप्रदत्त खाद्यपदार्थ तथा टॉनिक है। इसके सेवन से जहाँ हमें शक्ति प्राप्त होती है, वहीं हमारा रोगों से बचाव भी होता है। शरीर को शक्तिशाली तथा निरोग बनाये रखने के लिए जिन तत्वों का होना परम आवश्यक है, वे सभी प्रायः शहद में विद्यमान हैं। इसमें लगभग ४० प्रतिशत ग्लूकोज, ३८ प्रतिशत फ्रक्टोज, २ से ५ प्रतिशत सुक्रोज, मालटोज, डेक्सट्रिन्स, गोंद, मोम तथा क्लोरोफिल होता है। इसके अतिरिक्त इसमें प्रोटीन, एसिड्स एन्जाइम्स, लौह, कैल्शियम, मैग्नीशियम, मैंगनीज, सल्फर, कॉपर, क्लोरीन और फास्फोरस आदि चौदह प्रकार के खनिज लवण

पाये जाते हैं। विटामिन में ए, सी तथा बी१, बी२, बी६ एवं बी१२ भी शहद में पाये जाते हैं। १०० ग्राम शहद से ३६० कैलोरी शक्ति प्राप्त होती है, जबकि १०० ग्राम देसी घी से ३०० कैलोरी शक्ति प्राप्त होती है। मूल्य में भी देशी घी की अपेक्षा शहद सस्ता बिकता है।

शहद पाचन क्रिया को स्वस्थ बनाता है। शारीरिक तथा मानसिक शक्ति बढ़ाता है। हृदय को शक्ति प्रदान करता है, थकावट दूर करता है और मनुष्य को स्वस्थ एवं दीर्घजीवी बनाता है। शहद का मुख्य गुण यह है कि पेट में पहुँचते ही पचकर तत्काल शक्ति प्रदान करता है।

सेवन विधि- शहद भोजन से पहले, भोजन के साथ तथा भोजन के बाद कभी भी लिया जा सकता है। इसका सेवन सभी ऋतुओं में लाभकारी है। यह खाद्यपदार्थों तथा औषधियों के साथ भी खाया जाता है और अकेले भी। योगवाही-वृत्ति होने के कारण यह जिस पदार्थ तथा औषधि के साथ लिया जाता है, उसके गुणों को कई गुणा प्रभावकारी बना देता है। इसी कारण आयुर्वेदिक औषधियाँ शहद के साथ खायी जाती हैं। शहद को जल, दूध, दही, मलाई, फलों के रस, रोटी, नींबू आदि किसी भी खाद्य पदार्थ के साथ खाया जा सकता है।

शहद न उष्ण है, न शीतल, गरम चीज के साथ लेने पर यह गरम तथा ठण्डी चीज के साथ लेने पर यह ठण्डा प्रभाव दिखलाता है। अतः गर्मियों में ठण्डे पेय के साथ, सर्दियों में गरम के पेय के साथ एवं वर्षा ऋतु में प्राकृतिक रूप में ही इसका सेवन करना चाहिए। अधिक गरम करने तथा अधिक गरम चीज में मिलाने से इसके गुण नष्ट हो जाते हैं। अतः इसे हल्के गरम पेय पदार्थ में ही मिलाना चाहिए। घी, तेल, आदि चिकने पदार्थों में समान मात्रा में शहद मिलाने से वे विषतुल्य बन जाते हैं। अतः चिकने

पदार्थों में समान मात्रा में शहद मिलाकर उनका सेवन नहीं करना चाहिए।

विभिन्न अवस्थाओं में शहद का उपयोग-

थकावट में-शहद का मुख्य गुण थकावट को दूर करना है। चीनी से पाचन-अंग खराब होते हैं। पेट में वायु पैदा होती है, किंतु शहद वायु बनना रोकता है, शारीरिक तथा मानसिक शक्ति को बढ़ाता है। अतः रात्रि में अथवा जब भी थकावट महसूस हो, दो चम्मच शहद आधे गिलास पानी में नींबू का रस निचोड़कर पीने से सारी थकावट दूर हो जाती है।

हृदय की कमजोरी में- शहद रोगग्रस्त हृदय को शक्ति देता है तथा स्वस्थ हृदय को पुष्ट एवं शक्तिशाली बनाता है। जब खून में ग्लाइकोर्जन की कमी से रोगी को बेहोश होने का डर हो तो शहद खिलाकर रोगी को बेहोश होने से बचाया जा सकता है। निर्बलता अथवा सर्दी के कारण जब हृदय की धड़कन अधिक हो जाए, दम घुटने लगे तो दो चम्मच शहद सेवन करने से नई शक्ति मिल जाती है। एक चम्मच शहद प्रतिदिन सेवन करने से हृदय सबल बनता है।

अपच तथा कब्ज में- शहद पाचन-अंगों में वायु बनना रोकता है, उदर-सम्बन्धी रोगों को दूर कर भूख बढ़ाता है एवं भोजन को पचाकर शरीर को शक्ति प्रदान करता है। यह प्राकृतिक रूप से हल्का दस्तावर है, अतः कब्ज के रोगी के लिये विशेष उपयोगी है। प्रातः तथा रात्रि में सोने से पहले ५० ग्राम शहद पानी या दूध के साथ पीने से अथवा त्रिफला के साथ सेवन करने से मन्दाग्नि और कब्ज की शिकायत दूर हो जाती है।

दमा तथा फेफड़े के रोगों में- दमा तथा फेफड़े के रोग जैसे ब्रोंकाइटिस, निमोनियाँ, क्षय आदि रोग शहद के सेवन से दूर हो जाते हैं। शहद फेफड़ों को बल देता है। खाँसी, गले की खुश्की, स्नायुकण तथा छाती में घरर-घरर की आवाज दूर करता है।

गर्भावस्था में- शहद में प्रोटीन तथा हारमोन होते हैं। गर्भावस्था में रक्त की कमी आ जाती है। दो चम्मच शहद प्रतिदिन सेवन करने से यह कमी नहीं आती तथा पर्याप्त प्रोटीन और हारमोन भी मिल जाते हैं। यदि गर्भवती महिला प्रतिदिन दूध के साथ

शहद का सेवन करे तो एक ओर जहाँ वह स्वस्थ रहेगी, वहीं दूसरी ओर उसका बच्चा स्वस्थ, सुडौल तथा आकर्षक होगा।

नेत्ररोगों में- उन सभी खाद्य पदार्थों का सेवन जिनमें विटामिन ए होता है, नेत्रों की सुरक्षा एवं नेत्ररोगों को दूर करने में लाभकारी होता है, नेत्रों की सुरक्षा एवं नेत्ररोगों को दूर करने में लाभकारी होता है। नेत्र विशेषज्ञों के अनुसार प्रतिदिन एक बूँद शहद नेत्रों में डालने से मोतियाबिन्द से बचा जा सकता है। जिन लोगों को मोतियाबिन्द हो गया हो, यदि वे प्रारम्भिक अवस्था में तीन-चार सप्ताह का उपयोग करें तो उन्हें निश्चित रूप से लाभ होगा।

शिशु-अवस्था में- शिशुओं को प्रतिदिन दिन में तीन बार आधा-आधा चम्मच शहद चटाने से वे स्वस्थ तथा हृष्ट-पुष्ट रहते हैं। दाँत निकलने वाले बच्चों के मसूढ़ों पर शहद मलने से दाँत निकलते समय उन्हें कष्ट नहीं होता। नींद में रोने वाले बच्चों को नियमित शहद चाटने से उनका नींद में रोना बन्द हो जाता है।

शुद्धता की पहचान

- शुद्ध शहद पानी में नहीं घुलता।
- रुई की बत्ती शुद्ध शहद में भिगोकर जलाने पर जलती रहती है, बुझती नहीं।
- शुद्ध शहद कपड़े पर कागज पर डालने से उन पर निशान तथा धब्बे नहीं बनाता।
- शुद्ध शहद में जीवित मक्खी डालने पर वह उड़ जाती है। शहद उसके पंखों पर नहीं चिपकता।
- शुद्ध शहद को कुत्ता नहीं खाता।
- शुद्ध शहद सर्दी में जम जाता है तथा गरमी पाकर पिघल जाता है।

शुद्ध शहद के सेवन से मनुष्य स्वस्थ, बलिष्ठ, नीरोग तथा दीर्घजीवी बनता है। इसका सेवन वृद्धावस्था के कष्टों से बचाता है। यदि मनुष्य आजीवन नियमित रूप से शहद का सेवन करे तथा स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाले दुर्व्यसनों से बचा रहे तो वह दीर्घ आयु प्राप्त कर सकता है और दूषित मनोवृत्तियों के विकारों से भी बच सकता है।

□□□

व्रतोत्सवतिथिनिर्णयपत्रक
मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष/सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त ऋतु

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	व्रत पर्व आदि विवरण
सप्तमी	सोमवार	पुष्य	9 नवम्बर	श्रीकालाष्टमी—काल भैरवाष्टमी
अष्टमी	मंगलवार	श्लेषा	10 नवम्बर	—
नवमी	मंगलवार	श्लेषा	10 नवम्बर	नवमी तिथि का क्षय
दशमी	बुधवार	मघा/पू०फा०	11 नवम्बर	—
एकादशी	गुरुवार	उ०फा०	12 नवम्बर	उत्पन्ना एकादशी व्रत (स्मार्त)
द्वादशी	शुक्रवार	हस्त	13 नवम्बर	उत्पन्ना एकादशी व्रत (वैष्णव)
त्रयोदशी	शनिवार	चित्रा	14 नवम्बर	शनि प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	रविवार	स्वाति	15 नवम्बर	—
अमावस्या	सोमवार	विशाखा	16 नवम्बर	सूर्य वृश्चिक में—संक्रान्ति दिवस सोमवती अमावस्या

मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष/सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त ऋतु

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	व्रत पर्व आदि विवरण
प्रतिपदा	मंगलवार	अनुराधा	17 नवम्बर	—
द्वितीया	बुधवार	अनुराधा	18 नवम्बर	चन्द्रदर्शन
तृतीया	गुरुवार	ज्येष्ठा	19 नवम्बर	—
चतुर्थी	शुक्रवार	मूल	20 नवम्बर	श्रीगणेश चतुर्थी व्रत
पंचमी	शनिवार	पू०षा०	21 नवम्बर	श्रीरामजानकी विवाहोत्सव
पंचमी	रविवार	उ०षा०	22 नवम्बर	पंचमी तिथि की वृद्धि
षष्ठी	सोमवार	श्रवण	23 नवम्बर	—
सप्तमी	मंगलवार	धनिष्ठा	24 नवम्बर	पंचक प्रातः 9/32 से
अष्टमी	बुधवार	शतभिषा	25 नवम्बर	श्रीदुर्गाष्टमी व्रत
नवमी	गुरुवार	पू०भा०	26 नवम्बर	—
दशमी	शुक्रवार	उ०भा०	27 नवम्बर	—
एकादशी	शनिवार	रेवती	28 नवम्बर	मेखदा एकादशी व्रत (सबका) श्री गीता जयन्ती पंचक समाप्त 5/25 प्रातः
द्वादशी	रविवार	अश्विनी	29 नवम्बर	प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	सोमवार	भरणी	30 नवम्बर	—
चतुर्दशी	मंगलवार	कृतिका	1 दिसम्बर	श्रीसत्यनारायण व्रत
पूर्णिमा	बुधवार	रोहिणी	2 दिसम्बर	—

पौष कृष्णपक्ष/सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त ऋतु

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	व्रत पर्व आदि विवरण
प्रतिपदा	गुरुवार	मृगशिरा	3 दिसम्बर	विकलांग दिवस
द्वितीया	शुक्रवार	आर्द्रा	4 दिसम्बर	—
तृतीया	शुक्रवार	आर्द्रा	4 दिसम्बर	तृतीया तिथि का क्षय
चतुर्थी	शनिवार	पुनर्वसु	5 दिसम्बर	श्रीगणेश चतुर्थी
पंचमी	रविवार	पुष्य	6 दिसम्बर	—
षष्ठी	सोमवार	श्लेषा	7 दिसम्बर	झण्डा दिवस